केवल सशस्त्र कृषि क्रांति द्वारा ही
कृषि संकट से किसानों को मुक्ति मिलेगी!

2 फरवरी, 2019

केन्द्रीय कमेटी

भाकपा (माओवादी)

केवल सशस्त्र कृषि क्रांति द्वारा ही कृषि संकट से किसानों को मुक्ति मिलेगी!

वर्तमान भारतीय अर्थव्यवस्था अभूतपूर्वक ढंग से कृषि संकट का सामना कर रहा है। 1960 दशक में लायी गयी 'हरित क्रांति' इस संकट का शुरूआत की। 1991 से देश में लागू की गई नई आर्थिक नीतियां कृषि क्षेत्र पर कार्पोरेट घरानों और बाजार शक्तियों की प्रभुत्व कायम किया। इसके जड़ें बुनियाद मूल देश में लागू पुरानी अर्ध औपनिवेशिक और अर्ध सामंती व्यवस्था में मौजूद हैं।

आज की देश के वर्तमान शासक वर्ग बड़े पूंजीपतियों और बड़े सामंतियों ने देश की औपनिवेशिक दौर में ब्रिटिश के दलालों और उनके विश्वासनीय सेवकों के रूप में रहे थे। वे ब्रिटिश वालों के साथ मिलकर देश की जनता को शोषण करते हुए ब्रिटिश औपनिवेशिक शासकों के खिलाफ जारी स्वतंत्र संग्राम का नेतृत्व करते हुए जनता के साथ धोखे देते आ रहे थे। दूसरी विश्वास युद्ध के बाद बदलती परिस्थितियों में साम्राज्यवादियों ने अपने अधीनस्थ राष्ट्रीयताओं और देशों पर परोक्ष शासन, शोषण और नियंत्रण की नयी औपनिवेशिक शोषणकारी नीतियों को लागू किये। ब्रिटिश साम्राज्यवादी देश में प्रत्यक्ष शासन जारी रखने की स्थिति नहीं रह गई। इससे 15 अगस्त 1947 को देश में सबसे बड़ी पार्टी कांग्रेस जो साम्राज्यवादियों की सेवा करनेवाले दलाल पूंजीपतियों और सामंतियों की प्रतिनिधित्व करती है, के हाथों में सत्ता को हस्तांतरित कर ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने देश से चले गये। इस तरह देश की तत्कालीन औपनिवेशिक और अर्ध सामंती अर्थव्यवस्था ने अर्ध औपनिवेशिक और अर्ध सामंती व्यवस्था के रूप में तब्दील हो गई।

सत्ता हस्तांतरण के बाद सर्वप्रथम सत्ता में आनेवाली नेहरू नेतृत्व वाली सरकार ने भारतीय दलाल शासक वर्गों द्वारा बनायी गयी 'बाम्बे योजना' (यह उस समय टाटा–बिड़ला योजना और फासीवादी योजना के रूप में जाना जाता था) को अनुमोदित कर पहली पंचवर्षीय योजना को लागू की थी। इसके तहत अस्तित्व में आयी मिश्रण अर्थव्यवस्था साम्राज्यवादियों विशेषकर अमेरिका साम्राज्यवादियों की दिशा–निर्देशन में ही बनायी गयी। यह 1970 और 1980 के अंत तक आर्थिक वृद्धि में राज्य द्वारा निर्णायक भूमिका अदा करने की हिदायत देनेवाली कीनीसियन आर्थिक सिद्धांत के अनुसार मुख्य

रूप से सार्वजनिक क्षेत्र को प्राथमिकता देते हुए बड़े पैमाने पर सार्वजनिक–निजी क्षेत्र में उद्योगों की स्थापना और बुनियादी ढांचे की स्थापना को प्रोत्साहन देने; उसके बाद 1991 से साम्राज्यवादी वैश्वीकरण की नीतियों के अनुसार उदारीकरण, निजीकरण को प्रोत्साहित करने चलते साम्राज्यादियों और दलाल शासक वर्गों के लिए सेवा की थी।

भारत में कृषि समस्या : 1947 में ही देश में विशेषकर ग्रामीण इलाके में किसानों में गरीबी, कर्ज का बोझ बड़े पैमाने पर व्याप्त थी। उन्हें उन्मूलन करने के लिए शासक वर्गों के पास कोई व्यापक योजना नहीं थी। दरअसल उस समय देश में बहुसंख्यक आबादी कृषि पर निर्भर थी। कुल जीडीपी में कृषि की हिस्सेदारी सबसे ज्यादा थी। उसके बाद सेवा और औद्योगिक क्षेत्रों की हिस्सेदारी थी। देश की औद्योगिकीकरण करने की जरूरत थी, जो कृषि पर आधारित होकर करने का था। यानी कृषि क्षेत्र के बुनियाद पर 'पांवों पर चलने' की अर्थव्यवस्था को निर्माण करने का था। साम्राज्यवाद पूंजी को नहीं हटाने, दलाल पूंजीपति वर्ग की पूंजी को राष्ट्रीकरण न करने, ग्रामीण इलाके में सामंतवादी व्यवस्था को और सामंतियों, महाजनों और व्यापारियों के वर्ग आधिपत्य को यथावत जारी रखने के कारण कृषि क्षेत्र में पूंजी निवेश करने और उत्पादक क्षमता को विकसित करने में रूखावट बनी हुई थी। इसलिए उस पराश्रायी वर्गों को पूरी तरह उखाड़कर जमीन को समान रूप से पुनःवितरण करना फौरी कार्यभार के रूप में रही थी। जमीन वितरण के बाद सहकारी कृषि कार्य और कम्युनों को निर्माण करते हुए कृषि क्षेत्र में माल उत्पादन में सही और प्रचंड विकास हो सकती थी। इसके साथ–साथ किसानों की क्रय शक्ति में अधिक वृद्धि हो सकती थी। फिर यह औद्योगिक उत्पादनों के लिए बाजार पैदा कर सकती थी। कृषि में अतिरिक्त मूल्य को उद्योगों के निर्माण के लिए निवेश के रूप में लगाने द्वारा वह कृषि उत्पादनों के लिए फिर बाजार पैदा कर सकती थी। औद्योगिक क्षेत्र के विकास ने कृषि क्षेत्र से आनेवाले अतिरिक्त मजदूरों को शामिल कर सकती थी। यह कुल मिलाकर देश के सभी तरह के आर्थिक और सामाजिक विकास की तरफ ले जा सकती थी। लेकिन प्रतिक्रियावादी भारतीय दलाल शासक वर्ग ने इस विकास की क्रम के पूरी विपरीत नीतियों को ही लागू किये।

किंतु किसान बगावतों के जरिए प्रकटित जनता की आक्रोश को खासकर महान और ऐतिहासिक तेलंगाना सशस्त्र बगावत को देखकर भयभीत होनेवाली भारतीय दलाल नौकरशाह पूंजीपति और सामंती वर्गों और

उनको प्रतिनिधित्व करनेवाली कांग्रेस सरकार ने जमीन पर सीलिंग लगाने और जमीनदारी उन्मूलन कानून के जरिए भूमि–सुधारों को लागू करने की नाटक रची। इसलिए बहुत हद तक जमीन को सामंतियों के रिस्तेदारों और उनके सेवकों के नाम पर, कुछ मौकों पर कुत्तों के नाम पर भी बदली की गई। 'फर्जी' नामों पर सामंतियों ने बहुत हद तक जमीन को बचा लिये थे। इसके साथ–साथ काफी, चाय, रबड़, फल बागानों, पशु पालन, शक्कर कारखानों के दायरे वाली गन्ने बागानों और आधुनिक तरीकों से खेती करनेवाली जमीनों को छूट दी गई। सामंतियों ने अपनी सत्ता को इस्तेमाल कर कई बटाईदारों को निकाल दिये अथवा अपने बटाईदारों को बदलते रहे और बटाईदारी कानून को बेरोकटोक उल्लंघन किये। फलस्वरूप वितरण करने के लिए अतिरिक्त जमीन के रूप में जो घोषण की गई वह बहुत ही नाममात्र थी। इस तरह सामंती वर्ग के हितों को बचाते हुए बहुसंख्यक ग्रामीण खेतिहर–गरीब किसानों को बली का बकरा बनाने के वजह से भूमि सुधार कार्यक्रम पूरी तरह नाकाम हुई। जमीन पर बड़े सामंतियों की दबदबा कायम रही। व्यापक ग्रामीण खेतिहर–गरीब किसानों के लिए अभी तक जमीन नहीं मिली। इस तरह शासक वर्गों ने भूमि–सुधारों को अमल किये बिना देशी बाजार को विस्तारित करना संभावित नहीं है के मौलिक सूत्र को नजरअंदाज किया। उन्होंने आर्थिक स्वावलंबी नीतियों की अमल करने के बजाय साम्राज्यवाद की दासता करते हुए तकनीक और निवेश के लिए मुख्य रूप से उसी पर पूरी तरह निर्भर होने के कारण देश में दिन–ब–दिन कृषि संकट तेज होता गया। तीसरी योजना के समय तक कृषि उत्पादन एक प्रतिशत ऋणात्मक रूप से घटी। अमेरीका से खाद्यान्न बड़े पैमाने पर आपूर्ति करनी पड़ी। इस क्रम को समझे बिना आज की कृषि संकट के मूल कारणों को समझना और संकट का समाधान के लिए सही मौलिक कार्यक्रम लागू करना संभव नहीं है।

दूसरी तरफ ग्रामीण इलाके में सामंती वर्ग ने ब्राह्मणीय हिंदुत्व विचारधारा को इस्तेमाल करते हुए बद से बदतर अर्ध सामंती शोषणकारी संबंधों को इस्तेमाल करने, अपने शोषण से निचोड़ी गई अतिरिक्त मूल्य को अनुत्पादक क्षेत्रों में इस्तेमाल करने, भारत की शासक वर्गों द्वारा कृषि क्षेत्र में पूंजीवादी तौर–तरीकों और उत्पादकता बढ़ाने में ध्यान नहीं रखने के कारण कृषि क्षेत्र में कोई मौलिक बदलाव नहीं आयी। ग्रामीण इलाके में बटाई पद्धति द्वारा बटाईदारों की उत्पादन में 50 फीसदी को बलपूर्वक जब्त करना, बंधुआ मजदूरी, सूदखोरी और व्यापार में निवेश के जरिए शोषण आदि गैर–आर्थिक

उत्पीड़न की तौर–तरीके के रूप में होती हैं। इसमें जातिगत व्यवस्था के जरिए शोषण और गैर–आर्थिक उत्पीड़न के जरिए अतिरिक्त मूल्य को निचोड़ना एक बहुत ही क्रूर तरीका है। ये देश को आगे बढ़ाने में और उत्पादन शक्तियों के विकास में मुख्य रूखावट के रूप में रही है। अपनी नई औपनिवेशिक शोषणकारी नीति को जारी रखने के लिए ठीक इन अर्ध सांमती संबंधों को ही साम्राज्यवादियों, विशेषकर अमेरीकी साम्राज्यवादियों ने अपनी सामाजिक बुनियाद बनाये। फलतः 1967 के अंत तक भारतीय अर्थव्यवस्था अत्यंत गहरी संकट में फंस गई। इस संकट से उबरने के लिए, अमेरीकी साम्राज्यवाद–प्रयोजित विश्व बैंक और अमेरीकी सहायता के मार्गदर्शन में भारतीय दलाल शासक वर्गों ने अर्ध सामंती संबंधों को सामाजिक आधार के रूप में इस्तेमाल करते हुए ग्रामीण इलाके में साम्राज्यवादी 'विकास नमूने' के रूप में नई कृषि रणनीति का सामने लाये। खाद्यान्न की आयात के लिए अमेरीकी साम्राज्यवाद पर निर्भर होकर निर्णायक तौर पर उसकी तरफ झुकी। विश्व बैंक के कठिन शर्तों को अनुमोदन किया। फलतः वह रूपये की मूल्य को घटाया (सबलोग जानतें हैं कि जून 1967 में डॉलर की मूल्य 4.80 से 7. 50 रूपये तक बढ़ायी। यह आज 75 रूपये तक पहुंची।) कृषि क्षेत्र को पूरी तरह साम्राज्यवादियों की सेवा करने के तरह पतन किया। अमेरीकी साम्राज्यवादियों, विश्व बैंक और अन्य साम्राज्यवादियों के एजेंसियों के मार्गदर्शन में 1948 से समावेशी विकास कार्यक्रम को सामने लाया गया। इसके तहत ग्रामीण सहकारी संगठनों आदि अमल में आयी। यह सब ग्रामीण इलाकों में बड़े सामंती वर्ग की सत्ता चलाने की मंच बन गयी। इन्हें फोर्ड पाउंडेशन, राकफेलर पाउंडेशन और अमेरीकी सहायता (अमेरीका अंतर्राष्ट्रीय विकास एजेंसी) अमेरीकी कृषि विकास विभागों ने पैसे मंजूरी की। इसको आगे बढ़ाते हुए 1961 में फोर्ड पाउंडेशन की वित्तीय सहायता से आईएडीपी (समग्र कृषि विकास योजना) को पंजाब में और देश के कुछ अन्य इलाकों में 1960 दशक के बीच राकफेलर, फोर्ड और केल्लोग पाउंडेशनों के सक्रिय भागीदारी से 'हरित क्रांति' के नाम पर आधुनिक कृषि पद्धतियां सामने आयीं। आइएमएफ (अंतर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष), विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन जैसे साम्राज्यवादी अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के जरिए उनके द्वारा लागू वैश्वीकरण नीतियों के कारण साम्राज्यवादियों के ऋण और अनुदानों के रूप में भी साम्राज्यवादी वित्तीय पूंजी ने बेरोकटोक देश में प्रवेश कर दिया। इससे साम्राज्यवादियों ने हमारे देश की अर्थव्यवस्था के समूचे महत्वपूर्ण क्षेत्रों और प्रशासन पर बेरोकटोक अपने नियंत्रण कर रहे हैं। खासकर तकनीकी विज्ञान

और निवेशों के लिए हजारों असमान और अपमानित समझौते करने में, भारी यंत्रों, कृषि उपकरणों, फौजी आपूर्ति, हथियार के कारखाने आदि के लिए साम्राज्यवादियों पर निर्भर होने में यह दिखाई पड़ती है। इस तरह साम्राज्यवादी वित्तीय पूंजी ने अन्य क्षेत्रों के साथ–साथ विशेषकर कृषि क्षेत्रों को भी निचोड़कर डामाढोल कर रही है।

कृषी जमीन–योजना व्याय और सिंचाई : भारत में कृषि योग्य जमीन का क्षेत्र फल 32.8 करोड़ हेक्टर है। लेकिन इसमें कृषि जमीन का क्षेत्र फल 1950–51 में 11.88 करोड़ हेक्टर थी, वर्तमान में वह यानी पिछले साढ़े छः दशकों में 16.2 करोड़ हेक्टर तक ही विस्तारित हो पायी है। 1951 में देशी उत्पादन में कृषि क्षेत्र की हिस्सेदारी 54 फीसदी रही। 2014 तक कृषि क्षेत्र में देश की आबादी में लगभग आधे (49 फीसदी) आबादी निर्भर होने के बावजूद यह हिस्सेदारी 14 फीसदी तक घट गई। पांचवीं पंचवर्षीय योजना में कृषि क्षेत्र के लिए केन्द्रीय बजट में 16 फीसदी तक खर्च की गयी, वहीं 11वीं पंचवर्षीय योजना में 5 फीसदी तक सीमित हो गयी। कुल निवेश में 1981–82 में कृषि क्षेत्र के लिए 58 फीसदी हिस्सेदारी होती थी। वह 2012–13 में 21 फीसदी तक गिर गयी। इससे सिंचाई, मूलभूत सुविधा, अनुसंधान, कृषि संबंधित कार्य प्रभावित हुई। मिसाल के तौर पर, सत्ता हस्तांतरण के बाद पांच दशकों के आकड़े के मुताबिक देश में उपलब्ध पानी की कुल सतही स्रोतों में केवल 15.3 फीसदी ही उपयोग में लायी गयी। भू–गर्भ जल का 25 फीसदी तक इस्तेमाल में लायी गयी। पानी के लिए कोई प्रबंधन नहीं होने के कारण बारिस के मोसम में पानी 85–90 फीसदी समुद्र में जा मिलती है। कृषि जमीन में एक चौथाई भाग लगातार बाड़ से नष्ट होती है। फलतः देश में 99 जिलों, यानी 25 फीसदी इलाके अकाल ग्रस्त के रूप में वर्गीकृत है। भारी सिंचाई व्यवस्था के लिए बहुउद्देशीय प्रोजेक्ट और बांधों को निर्माण करने की दावा जितने भी सरकार की जाने के बावजूद नहरों और तालाबों के जरिए सरकार द्वारा उपलब्ध करवायी गयी सिंचाई सुविधा से सिंचित जमीन की प्रतिशत बढ़ा नहीं, बल्कि कम हुयी 1950–51 में नहरों के नीचे सिंचित जमीन 34.4 फीसदी है। वह 1992–93 तक 33.1 फीसदी तक घट गयी। तालाबों के नीचे सिंचित जमीन 1950–51 में 17.2 फीसदी थी। वह 1992–93 में 6.4 फीसदी तक गिर गयी। नलकूप और नहरों के नीचे सिंचित जमीन 1950–51 में शून्य से शुरू होकर 1990–91 तक 30.3 फीसदी तक, 1996–97 में 44 फीसदी तक वृद्धि हुई। नवंबर 2010 तक कुल सिंचित जमीन 39 फीसदी तक गिर गयी।

'हरित क्रांति' और उसकी दुष्परिणाम : जगजाहीर है कि भारतीय शोषक–शासक वर्गों द्वारा साम्राज्यवादी कम्पनियों के मुनाफे के लिए यहां की कृषि के पारम्पारिक पद्धतियों को मिटाकर 'हरित क्रांति' के नाम पर आधुनिक पद्धतियों को हथिया लिया। इसका लक्ष्य है 'जोतने वालों को जमीन' के आधार पर अतिरिक्त जमीन को खेतिहर–गरीब किसानों के बीच वितरित करने की मौलिक विषय से भटकाकर लाल क्रांति का विकल्प के रूप में काम करना और साम्राज्यवादियों के माल (कृषि यंत्र और रसायनिक उर्वरकों, कीटनाशक दवाइयों, अधिकोत्पादन किस्म के बीज आदि) के लिए गारंटी तौर पर बाजार का उपलब्ध कराना। 'हरित क्रांति' के कारण कुछ समय तक उत्पादन बढ़ने के बावजूद वह स्वावलंबी वाली किसानों की पारम्पारिक कृषि तौर–तरीकों को ध्वस्त किया। क्रमशः फसलों की उत्पादन उल्लेखनीय रूप से घट गयी। एक आंकड़े के मुताबिक 1971–82 के बीच किसानों की आय में लगभग 45 हजार करोड़ रूपये कमी आयी।

1974 के बाद सरकार द्वारा बनायी गयी व्यापार नियम कृषि क्षेत्र के खिलाफ है। इसके कारण किसानों के आय उल्लेखनीय स्तर पर कृषि से गैर कृषि क्षेत्र में बदलने में मजबूर किया। इस तरह 'हरित क्रांति' सामंतियों व धनी किसानों में सिर्फ एक तबके के लिए ही मददगार साबित हुई। अधिक व्यय वाली आधुनिक कृषि तौर–तरीकों को ऋण सुविधा नहीं मिलने, कृषि उत्पादन के मूल्य बहुत कम हो जाने के कारण गरीब, मध्यम किसान और धनी किसान के एक तबके के जीवन स्तर दिन–ब–दिन बेहाल होती गयी। पुरानी धनी किसानों से उपजे नये बड़े पूंजीवादी अनुकूल जमीनदारों सहित बहुत कम संख्या में बड़े सामंतियों को छोड़कर बहुसख्यक किसानों खासकर गरीब किसानों और कृषि मजदूरों और उनके साथ मध्यम किसानों में उल्लेखनीय तबके एक तरफ महाजनों, व्यापारियों, पूंजीवादी अनुकूल बड़े जमीनदारों के और दूसरी तरफ बैंकों और अन्य वित्तीय संस्थाओं के गिरफ्त में चले गये। कृषि क्षेत्र पर साम्राज्यवादी वित्तीय पूंजी की पकड़ और मजबूत होती आयी। भारत देश की विश्व बैंक का ऋण में भी भारी वृद्धि आयी। रसायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयां अति इस्तेमाल के वजह से क्रमशः जमीन की उत्पादन की क्षमता घट जाने से क्षार और खारा जमीन के रूप में तब्दील होकर उत्पादन में बहुत कमी आयी। प्रायः फसलें बीमार से ग्रस्त हो गयी और कीटनाशक दवाइयां भी काम नहीं करने की स्थिति पैदा हुयी। उक्त आधुनिक पद्धतियां और योजनाएं पर्यावरण के लिए अनुकूल नहीं है। इसके कारण जमीन सहित पानी, वायु और पूरी पर्यावरण ही प्रदूषित हो

गयी। भू–जल स्तर घट गयी। दरअसल रसायनिक पदार्थों के बजाय जैविकता के आधार पर आधुनिकता होनी चाहिए थी। आज भी जब जैविक कृषि पद्धति की बात हो रही है, किन्तु उसमें भी साम्राज्यवादी कंपनियों का हित ही प्रधान है। विगत में किसान विभिन्न तरह के फसलें उगाने के तरीके लागू करते थे, यानी खाद्यान्न, दलहन, तिलहन और साग–सब्जी उगाते थे। अभी उनके स्थान पर एक ही फसल उगाने (मोन कल्चर) की तरीके अमल किया जा रहा है। इसके कारण खाद्यान्न की समस्या तीव्र हो जाना ही नहीं बल्कि एक फसल उगाने के तरीके के कारण कृषि कार्य ही खतरे में पड़ गयी। शासक वर्गों द्वारा लागू करनेवाली आधुनिक तौर–तरीकों के कारण व्यापार फसल उगाना अनिवार्य हो गयी। फलतः किसानों पर असहनीय ऋण–भार बढ़ गयी।

ट्रेक्टर और अन्य कृषि यंत्र विस्तार से इस्तेमाल करने के कारण ग्रामीण बेरोजगारी में बड़े पैमाने पर वृद्धि हुई। 'हरित क्रांति' की रणनीति को सरकार द्वारा सिंचाई सुविधा रही देश के एक तिहाई इलाके में ही अमल करने, चयनित इलाकों के लिए ही संस्थागत ऋणों, उर्वरक के लिए भारी सब्सीडी आदि सरकारी रीयायतें उपलब्ध कराने, देश के बाकी ग्रामीण इलाकों के लिए बहुत कम राशि आवंटित करने, उस रणनीति को आंशिक तौर पर ही अमल करने के कारण क्षेत्रीय असमानताएं और गरीब व अमीर किसानों के बीच में खायी बड़ गयी।

किसान विगत में अपने जरूरतमंद बीज, उर्वरक, कीटनाशक दवाइयां खुद बनाते थे। 'हरित क्रांति' से यह स्थिति उलट गयी। अधिक उत्पादन वाली बीज रसायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयां, कृषि में इस्तेमाल होनेवाली अन्य चीजें और सामग्री पर निर्भरता बहुत बड़ गयी। इनकी उत्पादन पूरी तरह साम्राज्यवादियों, दलाल नौकरशाही पूंजीपति और सामंतियों के कृषि कम्पनियों के हाथों में केन्द्रिकृत है। ये कृषि क्षेत्र को निर्लज्जता से दोहन किया है।

महाजनों के गिरफ्त में किसान : आधुनिक पद्धति बहुत ही खर्चीला और मेहनती है। सरकार ने बैंकों को राष्ट्रीयकरण करने के बावजूद बढ़ती कृषि व्यय को संभालने के लिए संस्थागत ऋण नहीं मिलने के कारण किसान की स्थिति कमजोर हो गयी। ऋण उपलब्ध करानेवाली सहकारी बैंकों और सोसाइटियों के प्रबंधन कमेटियां सामंतों और बड़े धनी किसानों के कब्जे में हैं। इसलिए उनके द्वारा दी जानेवाली ऋणों में अधिक हिस्सा

ग्रामीण उच्च वर्ग के एक तबके ने छीनने में कामयाब हुई। सहकारी बैंकों और अन्य बैंकों का मुख्य लक्ष्य किसानों को विकास करने के बजाय सिर्फ मुनाफे कमाने का ही है। इसके अलावा ट्रेक्टर और अन्य यंत्रों को इस्तेमाल करना, बड़े भूखंड के बिना मुमकीन नहीं है। इससे मजबूरन गरीब और मध्यम किसानों ने अपने जमीन को बेच दिये और सामंतियों ने इन जमीनों को छीनकर और अमीर हो गये।

फलस्वरूप 'हरित क्रांति' के बाद भी खाद्यान्न के मामले में देश स्वावलम्बी होने के बजाय उसकी उत्पादन घट गयी। उदाहरण के लिए 1951–93 के बीच औसतन हर व्यक्ति के लिए धान की उपलब्धी 100 ग्राम से कम हो गयी और दलहन, तिलहन की उपलब्धी 60.7 ग्राम से 36.28 ग्राम तक घट गयी। खाद्यान्न को आयात करने की स्थिति जारी रही। यह स्पष्ट हो गयी कि खाद्यान्न के मामले में स्वावलंब होने की सरकारी बातों में सच्चाई नहीं है।

विश्व व्यापार संगठन का धक्का : 'हरित क्रांति' के बारे में फैलाए गए भ्रम 1973 तक पूरी तरह भण्डाफोड़ हो गयी। 1980 के दशक में उदारवादी नीतियों, 1991 में नयी आर्थिक नीतियों (उदारीकरण, निजीकारण और वैश्वीकरण–एलपीजी) को लागू करने, 1995 में विश्व व्यापार संगठन (डब्लुटीओ) का गठन के बाद, उसके साथ भारत के दलाल शासकों द्वारा किए गए समझौतों के कारण सार्वजनिक क्षेत्र के नियंत्रण में होने वाली देश की मिश्रण अर्थव्यवस्था के जगह में सार्वजनिक क्षेत्र के नियंत्रण से बाहर होकर, अपेक्षाकृत तौर पर पाबंदियों से बाहर होकर देश–विदेशी कार्पोरेट संस्थानों के लिए मार्ग प्रशस्त किया।

- 1995 से डब्लुटीओ के नीतियां देश में अमल में आयी हैं। इस पर अपनी वर्चस्व कायम रखने वाली अमेरिका जैसे साम्राज्यवादी देश एक तरफ अपने देशों में कृषि क्षेत्र के लिए ब्लू बाक्स, ग्रीन बाक्स के नाम पर भारी सब्सिडी दे रही हैं; दूसरी तरफ सब्सिडी घटाने पर पिछड़े देशों पर गंभीर दबाव ला रही हैं। इसके कारण हमारी देश के दलाल शासकों ने देशीय बाजार को उदारीकरण करने की नीतियों के तहत कृषि क्षेत्र के लिए देने वाली रियायतें घटायी। इससे उर्वरकों के मूल्य, बिजली के दर, पानी पर टैक्स बहुत महंगे होकर फसलों की उत्पादन व्यय बढ़ गयी। इसके मुताबिक फसलों के वाजिब मूल्यों में वृद्धि नहीं होने

के कारण कृषि कार्य नकुसानदेही हो गयी।

- 1991 से बीजों के उद्योग में सरकारी और निजी क्षेत्र के देशीय कंपनियों के प्राथमिकता घटाते हुए उसमें 100 प्रतिशत विदेशी हिस्सेदारी मंजूरी दी गयी।
- 1997 से कृषि के सभी उत्पादनों को प्राथमिकताओं की आम व्यवस्था (जीएसपी) के अंदर लाकर, सभी किस्म के कृषि उत्पादनों के निर्यात और आयात पर सभी पाबंदियों को समाप्त कर दिया। मेधो संपत्ति के अधिकार संकरक्षण नियम को समाप्त करने के साथ–साथ बीज और विभिन्न इलाकों के प्राणियों के लिए कोई सुरक्षा नहीं रह गयी। किसान अपनी बीजों की खुद तैयार करने के स्थिति हो या बाजार में एक बार बीज खरीदने के बाद उन बीजों से पुनरुत्पादन करने की अवसर हो समाप्त हो गया। किसान पूरी तरह विदेशी, बहुराष्ट्रीय बीज व्यापार कंपनियों पर निर्भर होने की स्थिति उत्पन्न हुई। 2010 तक बीजों के व्यापार लगभग 30 प्रतिशत, रसायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयों की उत्पादन और व्यापार लगभग 90 प्रतिशत बहुराष्ट्रीय कंपनियों के नियंत्रण में चली गयी।
- 1998 में 470 कृषि उत्पादनों के आयात पर लगायी गयी परिमाणात्मक सभी पाबंदियों को समाप्त किया गया। 1999 में और 1400 कृषि उत्पादनों को ओपेन जनरल लाइसेनसिंग (ओजीएल) के दायरे में लाये गए। कृषि में विदेशी व्यापार को नियंत्रित करनेवाले सभी नियमों को हटाया गया।
- बीजों के आयात को और उदारीकरण किया गया।
- आयात शुल्क 100 से 30 फीसदी तक घटाया गया। इसके कारण एक दशक में उल्लेखनीय स्तर पर आयात शुल्क घट गये। विदेशी कृषि उत्पादन हमारे बाजारों को डुबो रहे हैं। इसलिए उन उत्पादनों के साथ हमारे किसान द्वारा निकाले गये कृषि उत्पादन प्रतिस्पर्धा लेने में पिछड़ रहे हैं।
- वित्तीय उदारीकरण नीतियों के कारण बैंकों ने गैर–कृषि क्षेत्रों को प्राथमिकता दिये हैं और कृषि क्षेत्र को नजरअंदाज की है। 1997 से ग्रामीण इलाकों के कमजोर वर्गों के लिए प्राथमिकता देकर ऋण उपलब्ध कराने की नियमों को कमजोर कर –

नजरअंदाज कर, व्यापार को लाभ–हानि के आधार पर कई ग्रामीण बैंकों को बंद किया। इससे ऋणों के लिए किसान बाजार के व्यापारियों और निजी सूदखोरों का शोषण का शिकार हो रहे हैं।

- कांट्रेक्ट–कार्पोरेट कृषि तरीके को लागू किया गया। खाद्यान्न सुरक्षा को नजरअंदाज कर छोटा ककड़ी, लाल मक्काई, अधिक रस वाले टमाटर, फूल आदि बाजार अनुकूल फसलों को प्रोत्साहित किया गया। इन फसलों के लिए लागत अधिक होगी। इसलिए छोटे किसान इन्हें उगाना मुश्किल है, इस तरह प्रचार कर कांट्रेक्ट–कार्पोरेट कृषि में लाभदायक हिस्सेदारी के साथ उनके जमीन को कब्जा कर लिया गया। इस तरह कांट्रेक्ट–कार्पोरेट कृषि तरीके छोटे और मध्यम किसानों को तबाह किए। रीलयंस जैसे कुछ कम्पनियां ही उठायी है।
- किसानों की कमजोरियों को इस्तेमाल कर कृषि उत्पादनों के लिए अग्रिम बाजारों को निर्माण किया गया। भविष्य में किस फसल की उत्पादन कितनी होगी और उसका मूल्य कितना होगा अनुमान लगाकर उस पर व्यापार करना ही अग्रिम बाजार कहलाता है। साधारण शब्दों में कहा जाये तो यह जुआ का खेल है। इस सट्टे बाजार में सिर्फ दलालों और बाजार प्रबंधकों ने ही लाभ कमाते हैं, किसानों को कुछ नहीं मिलेगी।
- वित्तीय सुधारों के तहत बजट में वित्तीय घाटा को कम करने के लिए ग्रामीण बुनियादी सुविधाओं का निर्माण और कृषि क्षेत्र के लिए सरकारी निवेश बहुत हद तक कम किया गया है।

फलतः कृषि क्षेत्र में अभूतपूर्व ढंग से कृषि संकट फूट पड़ी है। निःसंदेह प्रत्यक्ष रूप से डब्ल्यूटीओ से किये गये समझौते के कारण ही गरीब और मध्यम किसान ऋणों के दलदली में फंस रहे हैं और उन्हें फसलों के लिए वाजिब मूल्य नहीं मिल रही हैं, इसकी वजह से देशभर में बड़ी संख्या में किसानों ने आत्महत्याएं किए हैं।

जमीन समस्या : निःसंदेह भारत देश में अभी भी सड़ीगली अर्ध औपनिवेशिक और अर्ध सांमती व्यवस्था जारी रहना ही किसानों के इस दूभर स्थिति का मूल कारण है। देश में किसानों की मुख्य समस्या जोतनेवालों को जमीन नहीं रहना। इसलिए कुल किसानों की आबादी में 65 प्रतिशत

रहनेवाली खेतिहर–गरीब किसानों द्वारा कमानेवाले आय से अपने आवश्यकताओं को पूरा करना मुश्किल हो गयी। उनकी आय में से 48 फीसदी कृषि से और 52 फीसदी दैनिक मजदूरी से मिलती है। कृषि काम के लिए जोत धीरे–धीरे छोटा होकर उत्पादन नहीं बड़ रहा है। ग्रामीण इलाकों में जमीन गांव के सामूहिक संसाधन, मछली पालन, जल स्रोत, जंगल, खदान जैसे सभी प्रकृतिक संसाधनों पर कुछ मुठीभर सामंतियों, धनी किसानों के हाथों, नई सामंती किस्म राज्य के हाथों, देशी और बहुराष्ट्रीय घरानों के हाथों में केन्द्रिकृत हो जाने, आजीविका खतरे में पड़ जाने के कारण खेतिहर–गरीब किसानों की संख्या इसके साथ–साथ ग्रामीण बेरोजगारियों और अर्ध मजदूरों की संख्या भी बड़ रही है। 'विस्थापित आरक्षित सेना' का उद्‌भव देश के दलाल शासकों के साम्राज्यवादपरस्त, देशद्रोही, प्रतिक्रियावादी और दिवालिया नीतियों का ही नतीजा है। देश के शासक वर्ग भूमि सुधारों को अमल करने की बातें करते हैं, फिर भी ग्रामीण इलाके में अग्रिम पक्ति में रहनेवाले (सामंतों और धनी किसानों) 7 फीसदी परिवार के हाथों में लगभग आधे जमीन है (राष्ट्रीय साम्पल सर्वे 70वीं राउंड, 2012–13 के अनुसार)। सरकारें बंजर जमीनों को भी गरीबों के बीच वितरित नहीं करती है। वितरित जमीन भी साम्पतियों और कार्पोरेट घरानों के कब्जे में हैं। जबरन कब्जे किए गए जमीन को नियमित करने के नाम पर सरकार फिर से उन्हीं लोगों को जमीन सौंप रही है।

काश्तकारी समस्या : देश में आज भी काश्तकारी व्यवस्था गंभीर रूप से जारी है। जमीन की बटाई कुल फसल उत्पादन में 1/5 से एक चौथाई हिस्से से अधिक नहीं लेने की काश्तकारी कानून नाममात्र रह गयी है। सामंतियों ने काश्तकारी किसानों को जमीन से कभी भी बेदखल किया जा सकता है। इससे काश्तकारी किसान बंधुआ मजदूरों के रूप में काम करने के लिए मजबूर है। काश्तकारी दरों में एक तिहाई से दो तिहाई तक वृद्धि हुई। काश्तकारी किसानों को संस्थागत ऋण हो, सब्सिडी हो नहीं मिल रही है। इससे बढ़ती कृषि खर्चों के साथ उन्होंने ऋणों के दलदल में फंस गये हैं।

जबरन भू–अधिग्रहण–बढ़ती विस्थापित आरक्षित सेना : देश के शोषक–शासक वर्गों ने विभिन्न साम्राज्यवाद–प्रायोजित भारी उद्योगों, औद्योगिक गलियारों, प्रकल्पों, बांधों, रियल एस्टेटों (थर्मल व परमाणु बिजली प्लेंट, स्टील प्लांट, रिफाइनरी आदि उद्योगों, पोलावरम जैसे बांधों, 4–6

लाइनवाले एक्सप्रेस हाइवे, हवाई अड्डों, बंदरगाहों आदि) के निर्माण के लिए लागू किये जानेवाली जबरन भूमि–अधिग्रहण नीतियों के कारण 2010 तक लगभग 4 करोड़ एकड़ जमीन उनकी कब्जे हो गयी है। खेतीयोग्य जमीन की क्षेत्र फल घट गयी है। फलतः देश में अपनी संसाधनों के अलावा अपने अस्तित्व ही खो जानेवाली करोड़ों जनता आर्थिक तौर पर देखा जाये तो कृषि मजदूरों, गरीब किसानों, मध्यम किसानों के अलावा हस्तशिल्पियों, शहरी गरीबियों, बेरोजगारों, सामाजिक तौर पर देखा जाये तो आदिवासी, दलित पिछड़े जातियों के लोग विस्थापित आरक्षित सेना में शामिल हो रहे हैं।

जमीन समस्या, काश्तकारी समस्या और जबरन विस्थापित समस्या देश के कृषि संकट की गंभीरता को ही प्रतिबिंबित करती है।

मोदी के शासन में गहराती कृषि संकट

लगभग सात दशकों तक केन्द्र व राज्य सरकारों को चलाने वाली कांग्रेस के साथ–साथ विभिन्न क्षेत्रीय पार्टियों द्वारा लागू किये गये साम्राज्यवादपरस्त नीतियों को ही मोदी सरकार ने आक्रमक रूप से अमल करने के कारण कृषि संकट और गंभीर स्तर तक पहुंच गयी है। विगत पांच सालों में कृषि क्षेत्र में मोदी सरकार द्वारा लागू किये गये नीतियों और उनके दुष्परिणामों पर नजर डालेंगे।

मोदी की चुनावी वादा खिलाफी : लोक सभा चुनावों में मोदी किसानों के लिए तीन मुख्य वादे किये थे। 1. स्वाामिनाथन आयोग रिपोर्ट का अमल. 2. 2022 तक किसानों की आय दोगुणी करना. 3. व्यापक कृषि बीमा योजना। चुनावों में मोदी किसानों के लिए किये गये वादों के प्रति एक साल पूरा होने के पहले ही मोदी ने खाली हाथ दिखाया। चुनाव में किसानों से किए वादों से महज एक साल पूरे होने के पहले ही मोदी पलट गए। 20 फरवरी 2015 को मोदी सरकार ने तो बाकायदा सुप्रिम कोर्ट में हलफनामा दायर करते हुए कहा कि वह स्वामिनाथन आयोग की शिफारसों को लागू नहीं कर सकती इससे मार्केट में भारी उथल–पुथल मचेगी। फिर किसान आंदोलन का जोर देखकर और 2019 के लोकसभा चुनाव को देखकर 2018 के बजट में किसानों को डेढ़ गुना एमएसपी देने की बात और एक बार कही जो सरासर झूठ बात साबित हुआ। किसानों के आय को दो गुणा करने के दूसरे वादा भी धोखा है जो बार–बार साबित हो रही है। तीसरे बीमा कंपनियों के मुनाफे पहुंचाने जैसा योजना को तब्दील किया।

मोदी सरकार ने अर्ध सामंती बुनियादी पर ही पिछले सरकारों के तरह ही कार्य किया। वह सत्ता में आने के कुछ ही महीने में योजना आयोग को रद्द कर नीति आयो का गठन किया जिससे अपनी निरंकुश चरित्र को उजागर किया। यह स्पष्ट है कि योजना आयोग अपनी 60 साल के इतिहास में साम्राज्यवाद और उनके दलाल शासकों के लिए ही सेवा की थी। लेकिन योजना की परिकल्पना ही एक तरह स्तालिन नेतृत्ववाली सोवियत समाजवादी अर्थव्यवस्था के सफलताओं के कारण विश्व के सामने परिचत हुए इस योजना के इस प्रगतिशील/क्रांतिकारी भावना को ब्रह्मणीय हिंदू फासीवादी नीतियां लागू करनेवाली मोदी सरकार तिरस्कृत करने में कोई अजीब की बात नहीं है। इसलिए वह अमेरीकी साम्राज्यवादियों के निर्देशन के अनुसार कृषि को कार्पोरेट कृषि के रूप में बदलने की योजना को तेजी से अमल किया। कॉन्ट्रक्ट फार्मिंग, कार्पोरेट फार्मिंग, ग्रुप फार्मिंग यह सब अंततः खेती को उद्योगपतियों के हाथों में सौंप कर किसानों को जमीन से बेदखल कर उन जमीनों में उन्हें मजदूर बनाने की नीति के बजाय और कुछ नहीं है। कृषि क्षेत्र और किसानों को शोषण कर देश–विदेश कार्पोरेट घरानों के लिए सुपर मुनाफे पहुंचाना ही मोदी सरकार का मूलमंत्र है। इसके लिए किसानों के विकास के नाम पर मंत्रालय का नाम बदलना जैसे नाटक बहुत किए जा रहे हैं। मीठी–मीठी शब्दों के आवरण में किसान विरोधी नीतियाँ ही लायी जा रही है। दुनिया भर के व्यापार के एकाधिकार के जरीये खेती, उद्योग पर कब्जा जमाये हुए मेनसेंटो, वॉलमार्ट जैसी बहुराष्ट्रीय कंपनियों के लिए भारत में दरवाजे खोल दिए हैं और उसके सुविधा के अनुरूप कृषि नीतियाँ बनाई जा रही है। 'मेकिन इंडिया' के नाम पर विभिन्न साम्राज्यवाद देशों और बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के साथ समझौतों के मुताबिक स्थापित किये जा रहे भारी उद्योगों, खदानों, रिफाईनरी आदि के कारण कार्पोरेट कृषि के कारण वायु और जल प्रदूषण तथा भूखक्षार बड़ रही है। जिसकी वजह से पर्यावरण नष्ट होने के साथ जंगलों के क्षेत्रफल घट रही है। यह कृषि संकट के आग में घी का काम कर रही है।

राष्ट्रीय कौशल विकास परिषद की एक बात को मोदी की कृषि नीतियों से जोड़कर गौर करना है, जिसमें कहा है कि 2022 तक खेती पर निर्भर 58 प्रतिशत जनसंख्या को 38 प्रतिशत तक लाना है। इसका सीधा मतलब कुछ को मार डालना, कुछ को दिहाड़ी मजदूर बनाना। इस नीतियों वजह से ही उल्लेखनीय संख्या में किसान आत्महत्या करने के साथ–साथ खेतीबाड़ी छोड़कर 70 प्रतिशत किसान शहर जाना इच्छा जाहीर किये हैं। इस दौरान

30 करोड़ लोग शहर में पलायन किए हैं। 1951–2001 के बीच ग्रामीण आबादी में 10 फीसदी, किसानों की संख्या में 15 फीसदी खेतिहर मजदूरों की संख्या में 10 फीसदी घट गयी है। हर दिन 100 किसान किसानी छोड़ देते है। दो बार अखाल ग्रस्त होने, नोट बंदी करने, बेमोसमी बारिस और बाड़ आने और फसल बीमार ग्रस्त हो जाने के कारण किसान नुकसान हुए हैं। इस तरह कृषि संकट गंभीर हो जाने, महंगाई और बेरोजगारी एक साथ होने की वजह से किसान जातियों के युवाओं से भी आरक्षण की मांग उठ रही है।

मोदी ने किसानों के लिए 10 सूत्री कार्यक्रम : 1. आय दोगुणी करना, 2. फसल बीमा योजना, 3. कृषि सिंचाई योजना, 4. मृदा स्वास्थ कार्ड, 5. जैविक खेती, 6. दलहन और तिलहन मे आत्मनिर्भरता, 7. नीम लेपित युरिया, 8. राष्ट्रीय कृषि बाजार, 9. मोबाईल एप, 10. प्रकृति आपदा राहत।

मोदी शासन का साढ़े चार साल की क्रियान्वयन देखने से किसानों का एक भी कार्यक्रम धरातल पर खरा नहीं उतरा है। यह मात्र राजनीतिक रूप से फायदे के लिए मीडिया के सुर्खियों में लफ्फाजी के साथ लाया गया कार्यक्रम है।

2022 तक आय दोगुणी करना : 17 राज्यों के आर्थिक सर्वेक्षण रिपोर्ट में कहा है कि किसानों की सालाना आय 20,000 रूपये है। यह प्रति माह 1,662 रूपये होती है। 2022 तक आय को दोगुणी करने की बात कही जा रही है तो यह 3,332 रूपये प्रति माह हो जायेगी। यदी मुद्रास्फिती को शामिल कर लिया जाय तो यह होनेवाली दोगुणी आय का कोई हैसियत नहीं रखती। वैसे भी यदी 2022 तक किसानों की आय दोगुणी भी करनी हो तो कृषि का विकास दर 14 प्रतिशत चाहिए जो आज मात्र 2 प्रतिशत है।

मोदी की आय दोगुणी करने की बात भी कैसी झूठी है यह भी देख सकते हैं। 2017–18 में देश का जीडीपी 6.2 प्रतिशत है। कृषि जीडीपी 4.9 से खिसककर 2.1 प्रतिशत पर आ गया है (2014 से 2018 के बीच औसतन 1.9 प्रतिशत)। मोदी के शासनकाल में कृषि ग्रास वेल्यू एडेड (जीवीए–सकल मूल्यवर्धन) 5 प्रतिशत से भी कम रही। वर्ष 2016 के तीमाही में यह तीन बार ऋणात्मक रही जिसमें 3.05 प्रतिशत की गिरावट रही। फसलों की उपज रीकॉर्ड स्तर पर होने के बावजूद कीमतों में आई गिरावट के कारण किसानों की शुद्ध आय को कम कर दिया। (टर्म्स ऑफ ट्रेड) व्यापार के शर्तें लगातार कृषि क्षेत्र के प्रतिकुल बना रहा। कृषि में सकल पूंजी निर्माण में गिरावट चल

रही है, यह 2014–15 मे 8.3 प्रतिशत था वह 2015–16 में 7.8 प्रतिशत हो गया। बारिश की कमी के कारण 20 से 25 प्रतिशत आय कम हो रहा है। इस तरह किसानों की आय दोगुणी करनी है तो वर्ष 2018 को आधार मानेंगे तो 14 साल लग जायेंगे। और इन 14 सालों में बढ़ने वाली खेती में पूंजी का महंगाई और रूपये का जो अवमूल्यन होगा वह जोड़कर सोचा जाय तो दोगुणी होनेवाली आय दरअसल मूल्य के हिसाब से आधी भी नहीं रह जायेगी। अतः आय दोगुणी होने से भी किसानों के जीवन में कोई बदलाव नहीं आनेवाला और तो और ऋणभार से भूखमरी और बढ़ती बीज, खाद आदि के महंगाई की समस्या से वह आय किसानों को बाहर नहीं लाने वाला। गंभीर होनेवाली कृषि संकट को नहीं सुलझानेवाला।

न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) : केन्द्र सरकार किसानों के उत्पादन को न्यूनतम समर्थन मूल्य निर्धारित करती है। एक तो यह लागत के तुलना में नहीं है, वास्तविक लागत खर्च के एक तिहाई के आसपास ही न्यूनतम समर्थन मूल्य होता है। **पहली** बात तो यह है कि, यह किसानों की आर्थिक वृद्धि के लिए नहीं बल्कि वास्तविक कृषि उपज के दाम नियंत्रित करने का काम करता है। जिस तरह से समर्थन मूल्य तय किए जा रहे हैं, वह देखने से एमएसपी यह संकल्पना ही किसानों के साथ एक धोका है। **दूसरा**, भारत सरकार ने 23 फसलों का एमएसपी घोषित किया उसमें से केवल 3–4 फसलों को ही सीमित मात्रा में खरीदती है। एमएसपी के आधार पर किसान की मजदूरी सालभर में विभाजित करे तो वह केवल 20 से 30 रूपये प्रतिदिन होती है। **तीसरा,** किसानों पर आधार पंजीकरण, टोकन लेना वगैरे बहुतसी शर्तें लगाए हैं। **चौथा,** किसान से खरीदी गई उत्पादनों के लिए पैसों का भुगतान वक्त पर नहीं दिया जा रहा है। इससे मजबूरन किसान कम दाम पर साहूकारों को अपना उत्पाद बेचने में मजबूर है। तब किसान की आय दोगुणा होना तो दूर उल्टा बची खुची आय गवाँ बैठने की नौबत आ गई है।

जब तक किसानों के उत्पाद को पूरी तरह खरेदी करने की गारंटी नहीं होती तब तक एमएसपी ज्यादा रखने से भी किसानों को कोई फायदा होनेवाला नहीं। हर साल अपने उत्पाद न बेच पाने के कारण किसानों को 63,000 करोड़ रूपए का नुकसान हो रहा है। सरकार अब तक अनाज रखने के लिए पर्याप्त गोदाम और बोरे ही नहीं बना सकी, जिससे हजारों टन अनाज हर साल सड़ जाता है, तो किसानों का पूरा माल कहाँ खरिदेगी? वैसे भी एमएसपी तय करने के लिए सरकारी संस्था कृषि लागत और मूल्य

का आयोग (Commition for Agricultural Cost and Prise-CACP) का गठन किया गया है। मोदी ने लागत के डेढ़ गुणा कीमत देने की घोषणा की पर यह सी 2+ए 2+एफएल पर आधारित नहीं है बल्कि ए 2+एफएल पर आधारित है (ए 2 का मतलब है बीज, खाद, मजदूरी मिलाकर किसानी के लगने वाली लागत; एफएल का मतलब है परिवार के मेहनत; और सी 2 का मतलब है जमीन की काश्तकारी दर, पूंजी और ब्याज और ए 2 व एफएल मिलाकर लगाये जानेवाला खर्च)।

एमएसपी दो दर्जन फसल पर है। पर केवल धान और गेंहू पर ही दी जाता है। बागायती, साग–सब्जी का उत्पादन के लिए एमएसपी नहीं है।

कृषि उत्पादनों का मूल्य बराबर नहीं रहता है, मंडियों में कई नियमों को लगाया है, पूरा माल खरीदी नहीं किया जाता और माल के दाम से बैंक का ऋण पूरा काट लिया जाता है। इस चक्कर से बचने के लिए किसान पूरा माल मंडी में बेचने के बजाय निजी साहुकारों को कम दाम में बेचते है, इससे कम से कम उन्हें दैनिक आश्वयकताओं को पूरी करने के लिए कुछ पैसा हाथ में मिलता है। सरकार द्वारा बनाए इस चक्रव्युह से बचने के लिए किसान मजबूरी में ऐसा करना पड़ रहा है। धान और गेंहू की न्यूनतम समर्थन मूल्य का दर 3.5 प्रतिशत बढ़ने के बावजूद किसानों की आय घटी है, इसका कारण पिछले तीन साल में मुद्रास्फिती औसतन 7 प्रतिशत के करीब रही है।

2018 में रब्बी फसल में दिए एमएसपी पर नजर डालें :

फसल	ए 2	ए 2 + एफएल	सी 2	वादा किया एमएसपी सी 2 + 50%	दी गई एमएसपी
गेंहु	642	817	1,256	1,884	1,735
जौ	522	845	1,190	1,785	1,410
चना	1,977	2,461	3,526	5,289	4,400
मसूर	1,845	2,366	3,727	5,590.5	4,250

सरसों	1,354	2,123	3,086	4,629	4,000
कुसुम	2,216	3,125	3,979	5,968.5	4,100

2018 में पांच राज्यों के विधानसभा चुनाव नजदीक आते देख, और किसानों के आंदोलन के दबाव के कारण उन्होंने ड़ेढ गुणा न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) देने की घोषणा की, 2018 में चुनाव नजदीक आते देख, और किसानों के आंदोलन के दबाव के कारण अब वह कह रहे हैं कि ड़ेढ गुणा न्यूनतम समर्थन मूल्य (एमएसपी) देंगे यह आँखों में धूल झौंकने की बात है। केन्द्र सरकार कहती है कि लागत के ड़ेढ गुणा कृषि माल को भाव दे रहे हैं, आय दोगुणा करने की बात करते है, पर किसान तो आंदोलित है। यह सब कोरी घोषणाओं की चालबाजियाँ हैं जो चुनाव को ध्यान मे रखकर की जा रही है।

कर्ज माफी : देश में कुल 4,68,48,100 किसान कर्ज के बोझ तले दबे हुए हैं। उन पर 30 दिसंबर 2016 तक 12.60 लाख करोड़ रूपयों का कुल कृषि कर्ज है। देश का प्रत्येक किसान औसतन 47,000 रूपये का ऋणी है। किसानों के कर्ज पर बैंक द्वारा लिया जानेवाला ब्याज 42 प्रतिशत है। मूल कर्ज पर ब्याज दर 17.50 प्रतिशत, कर्ज नहीं चुकाया तो कर्ज और ब्याज को मिलाकर फिर 17.50 प्रतिशत ब्याज, 3 प्रतिशत दंड, 3.5 प्रतिशत सरचार्ज और 2 प्रतिशत वसूली का खर्च – इस तरह 42 प्रतिशत ब्याज किसानों से आंका जाता है। किसान अपने लिए गए कर्ज से दोगुणा से भी ज्यादा वापस देता है फिर भी वह कर्ज से कभी मुक्त नहीं होता। लिहाजा किसानों की आत्महत्या जारी है।

सरकार ने कंपनियों की 45,17,466 करोड़ रूपये की कर माफी 2005–06 से 2014–15 में की। यानी हर साल लगभग 4.5 लाख करोड़ रूपयों की माफी कंपनियों को दी जा रही है। पर किसानों को कर्ज माफी नहीं दी है। यह जीता जागता ताजा सबूत है कि मोदी सरकार साम्राज्यवादियों, बड़े सामंतियों और बड़े पूंजीपतियों की सरकार है एवं किसान विरोधी है।

जो कृषि ऋण के लिए 10 लाख करोड़ रूपये बजट प्रावधान है। उसमें किसान और कृषि कार्पोरेट कंपनियों के लिए अलग–अलग रूप से आवंटन नहीं है। अतः आज तक के ऋण बटवारें को प्रतिशत के रूप में देखने से

यह स्पष्ट है की 10 लाख करोड़ रूपये में से 8 लाख करोड़ रूपये तक का कर्ज किसानों के बजाय कृषि कार्पोरेट कंपनियाँ ले जायेगी। कृषि क्षेत्र के लिए फंड के परिमाण (कर्ज आपूर्ति वगैरे) लगातार बढ़ते रहे हैं। 2004 में 96,000 करोड़ रूपये थे वह अब 10 लाख करोड़ रूपये हुए। पर 50 प्रतिशत से भी ज्यादा फंड शहरी ब्रँचेस द्वारा फुड प्रोसेसिंग, फुड पार्क वगैरे में जाता है। कृषि के नाम पर दिया जा रहा कर्ज दरअसल कार्पोरेट कंपनियों और बड़े किसानों को जाता है। 1990 में 2 लाख रूपये से भी कम कर्ज लेनेवाले 92 प्रतिशत थे। वह आज 2018 में 46 प्रतिशत रह गए। इसका अर्थ कृषि के लिए ली जाने वाली कर्ज 54 प्रतिशत सीधे बड़ी रकम में जा रही है। इसका अर्थ होता है कि जरूरतमंद किसानों का हिस्सा दिन ब दिन लूटा जा रहा है। 44 प्रतिशत कर्ज गैर–संस्थाओं से (साहुकारों से) लिया जा रहा है। ऐसे में कर्ज माफी से केवल 56 प्रतिशत की ही बात होती है, दरअसल कर्ज माफी किसानों से ज्यादा बैंको को फायदेमंद साबित हो रही है।

पिछले तीन सालों में कार्पोरेट जगत को 17.5 लाख करोड़ रूपये का फायदा मिला। लेकिन उन्होंने 6.8 लाख करोड़ रूपये का कर्ज डुबाया है। 44 प्रतिशत कृषि ऋण वाणिज्यिक बैंकों की शहरी शाखा से बाटें गए। वर्ष 2005 से 2013 के दौरान छोटे और सिमांत किसानों को मिलने वाले 25 हजार रूपये तक के प्रत्यक्ष कृषि कर्ज की हिस्सेदारी 23 प्रतिशत से घटकर 4.3 प्रतिशत रह गई है। वहीं 1 करोड़ रूपये से ज्यादा प्रत्यक्ष कृषि कर्ज की हिस्सेदारी 7.5 प्रतिशत से बढ़कर 10 प्रतिशत पहुंच गई है। आरबीआई के आकडों के मुताबीक वर्ष 2015–16 में कृषि क्षेत्र का 7.4 प्रतिशत कर्ज दबाव में है। यानी जिन्हें लौटाना मुश्किल हो रहा है। वहीं औद्योगिक क्षेत्र में यह 19.4 प्रतिशत है। आरबीआई रिपोर्ट मार्च 2016 बताती है कि 6 प्रतिशत कृषि कर्ज डिफाल्ट हुआ जबकि कंपनियों ने 14 प्रतिशत कर्जों में डिफाल्ट किया। सरकारी आकड़े खुद बता रहे हैं कि किसान से ज्यादा डिफाल्टर पूंजीपति है। पर कोई पूंजीपति आत्महत्या नहीं करता, क्योंकि सरकार हर साल उन्हें कर्ज माफी और टैक्स माफी देते रहते है। अभी नाबार्ड की पूंजी 5 हजार करोड़ रूपये बढ़ाकर 30 हजार करोड़ रूपये की है। पर इसको फायदा किसानों से ज्यादा कृषि कंपनियों और प्रसंस्करण उद्योगों के नाम पर कार्पोरेट निगम ही लेंगे।

किसानों के कर्ज माफी पर सरकार की दोगली नीति है। राजनीतिक नेता कर्जमाफी की घोषणा करते हैं और उनके अधिकारी उसके उल्टा बोलते हैं। कर्ज माफी पर रिजर्व बैंक के गवर्नर उर्जित पटेल इसे नैतिक त्रासदी

कहते हैं। स्टेट बैंक की अध्यक्ष अरूंधती भट्टाचार्य इसे कर्ज अनुशासन बिगाड़ने वाला कदम बताती है, तो बैंक ऑफ अमेरिका के मैरिल लिंच इसका बैंको के बेलन्स शीट पर बुरा असर वाला कदम बताते हैं। तो सवाल खड़ा होता है कि क्या वाकई सरकार कर्जमाफी करने जा रही है या यह महज जुमले बाजी है?

किसानों के आंदोलन के सामने झुककर कुछ राज्यों ने कर्जमाफी की घोषणा की है। महाराष्ट्र 34 हजार करोड़ रूपये, उत्तर प्रदेश 36 हजार करोड़ रूपये, तेलंगाना 15 हजार करोड़ रूपये, आंध्रप्रदेश 20 हजार करोड़ रूपये, पंजाब 10 हजार करोड़ रूपये, कर्नाटका 8 हजार करोड़ रूपये कर्ज माफी घोषणा की है पर उसपर सही अमल अब तक नहीं किया है।

अब जनता में एक दूसरे के खिलाफ खड़ा करने की नीति अपनाई जा रही है। पैसा नहीं है यह बहाना बनाकर कर्मचारियों के सातवें वेतन आयोग द्वारा मंजूर की गई वेतन वृद्धि को रोककर, वह पैसा किसानों के कर्ज माफी में डाला जा रहा है। कर्जमाफी के नाम पर जनता से पैसा वसूलने के लिए योजना बनाई है। महाराष्ट्र के फडणविस सरकार ने किसान आंदोलन को तोड़फोड़ करने की पूरी कोशिश की। मगर कामयाबी नहीं मिलने से अंत में कर्जमाफी मंजूरी दी। इस कर्ज माफी में कई शर्तें लगाये हैं। कर्जमाफी में ऑन लाईन अर्जी भरने की सख्ती के कारण 89 लाख किसानों में से केवल 58 लाख किसान ही अर्जी भर पाए। कई किसानों के बंटवारे हुए पर माल की हक्क नहीं बना। इस कारण वे कर्जमाफी के हकदार नहीं हो रहे हैं। यह एक किस्म की छटनी है। इसे कर्जमाफी के 34 हजार करोड़ रूपये की रकम से 24 हजार करोड़ पर आ गई। 34 हजार के कर्जमाफी से राज्य के 1.36 करोड़ किसानों में से केवल 31 लाख यानी 23 प्रतिशत को ही फायदा होगा। बाकी 77 प्रतिशत किसानों को इसका कोई लाभ मिलने वाला नहीं हैं। जिनको लाभ मिलने की बात कही जा रही है उन्हें भी कई शर्तों से गुजरना पड़ेगा। ई–फार्म भरने के लिए बहुत कम समय दिया है और मृतक के नाम की जगह उसमें नहीं है ऐसे में आत्महत्या वाले किसान के नामपर यदी जमीन है और कर्जा है तो उनके परिवार को यह कर्जमाफी नहीं मिलेगी। यहां ध्यान देनेवाली बात यह है कि इस कर्ज माफी में केवल बैंकों के कर्ज की बात है जबकि 65 प्रतिशत कर्ज किसान साहुकारों से लेते हैं। नेशनल सैंपल सर्वे के मुताबिक महाराष्ट्र में 57 प्रतिशत किसान कर्ज में डुबे हुए हैं। उनका कर्ज माफ करने के लिए 1.14 लाख करोड़ रूपयें की जरूरत है जबकि राज्य का कुल बजट 2.57 लाख करोड़ रूपयों का है। यह कर्जमाफी

केवज एक चौथाई किसानों को होगी।

मध्य प्रदेश के शिवराज सिंह चौहान जब मुख्यमंत्री बने तब प्रदेश के किसानों पर 2,000 करोड़ रूपये कर्ज (किसान क्रेडिट कार्ड) था। जो आज 2018 में बढ़कर 44,000 करोड़ रूपये हो गया है। इसी तरह की कर्जमाफी भी किसानों से ज्यादा बैंको को राहत साबित हो रही है। कर्जमाफी की बात होती है पर वास्तव में पूरी कर्जमाफी कभी नहीं की है।

हाल ही में संपन्न पांच राज्यों के विधानसभा चुनावों में छत्तीसगढ़, राजस्थान और मध्यप्रदेश में सत्ता में आयी कांग्रेस सरकारों द्वारा भी कर्जमाफी एलान की गयी। दरअसाल, कई शोध और आंकड़ों द्वारा पता चलता है कि किसान किसानी करने के लिए ली जाने वाले कर्जों में सिर्फ 31 प्रतिशत ही बैंकों से उपलब्ध है और 69 प्रतिशत निजी कर्जों पर निर्भर है। यानी, कोई भी बता सकते हैं कि कर्जमाफी के वजह से किसानी करते हुए कर्ज में डुबे हुए छोटे और सीमांत किसानों को प्रत्यक्ष रूप से मिलने वाली फायदा नाममात्र ही है। दरअसल कई मौकों पर विभिन्न राज्य सरकारों द्वारा दी जाने वाली कर्जमाफी के वजह से होने वाली फायदा में अधिक हिस्सा कृषि के लिए बीज, खाद आदि के लिए, औजार और यंत्र बेचने वाली कंपनियों, व्यापारियों और डीलरों, कृषि उत्पादनों को किसानों से खरीदकर प्रोसेसिंग कर मार्केटिंग करने वाली कंपनियों और व्यापारियों, सैकड़ों एकड़ बागानों के मालिकों, कृषि जमीनों को अपने हाथों में रखकर बैंकों से कम ब्याज पर संस्थागत कर्ज लेने वाले जमींदारों, माइक्रो फाइनेन्स संस्थानों, अयोग्य लब्धिदारों, कभी कर्ज नहीं लेने वालों को मिलती है। जगजाहिर है कि संस्थागत कर्ज वितरण व्यवस्था में होने वाली कमजोरियों को इस्तेमाल कर अत्यधिक फीसदी कर्ज इन्हीं के वर्ग हड़पने की वजह से, कर्जमाफी का फायदा भी इन्हीं के लोगों को मिलती है। इसीलिए कर्जमाफी देने के बावजूद किसानों की आत्महत्याएं जारी है।

फसल बीमा योजना : प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना पूर्व की तीन बीमा योजना एनएआईसी, एमएनएआईएस, डब्लूबीसीआईएस इनको मिलाकर बनाई गई। जब इन तीन बीमा योजनाओं का ऑडीट किया गया था तब पाया गया कि इनको दावों को निपटाने 45 दिन के बजाय 3 साल लग गए थे। इसीलिए इनको मिलाकर प्रधानमंत्री फसल बीमा योजना 2016 में लायी गई। इस योजना में 2016 में बीमा कंपनियो ने 10,000 करोड़ रूपये का मुनाफा कमाया। वहीं किसानों ने जो 6,000 करोड़ रूपयों का दावा किया

था। उनमे से केवल 2,000 करोड़ रूपये ही किसानों को मिला है। कैग (सीएजी–कन्ट्रोलर ऑडिटर जनरल) की रिपोर्ट में कहा गया है कि प्रीमियम सब्सिड़ी के तौर पर 10 निजी बीमा कंपनियों को सरकारी क्षेत्र की एग्रीकल्चरल बीमा कंपनी ने दावों का वेरिफिकेशन किए बगैर ही 3,622.79 करोड़ रूपये का भुगतान कर दिया। इससे बिल्कुल साफ हो गया है कि फसल बीमा योजना किसानों के लिए नहीं बल्कि बीमा कंपनीयों के लिए है जो दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों की है।

हर बीमा कंपनी लागत का केवल तीन चौथाई ही वापस करती है। यह कारण की एलआईसी जैसी कंपनी इतना कमाती है की वह सरकार को भी कर्ज देती है। बीमा क्षेत्र को निजीकरण करने के बाद, इस क्षेत्र में इस भारी मुनाफे को देखकर अंबानी की रिलायन्स फायनान्स जैसी निजी कंपनियाँ भी इसमें खूद पड़ी है। फसल बीमा योजना अंबानी जैसे धन कुबेरों की तिजोरीयाँ भरनेवाली योजना है। किसानों से प्रति हेक्टर (लगभग 3000 रूपये/हेक्टर) हजारों प्रीमियम लिया जा रहा है। पर उनको वापस नहीं दिया जा रहा है। 2015 के नुकसान का बीमा 2016 में भी नहीं मिला। किसान रास्ते पर उतरे तब इतना भद्दा मजाक उनके साथ किया गया कि छत्तीसगढ़ के राजनांदगाव जिले के एक किसान को बीमा का केवल एक रूपये का चेक थमा दिया था। बीमा नियामक एवं विकास प्राधिकरण (इरडा) के मुताबिक गैर–जीवन बीमा कंपनियों की आय 2015 की तुलना में 25 प्रतिशत बढ़ गई है। कुल प्रीमियम आय (डायरेक्ट प्रीमियम इनकम अंडर रिटेन) बढ़कर 9,760.23 करोड़ हो गई। यह दिसंबर 2015 की 777.38 करोड़ रूपये के तुलना में 25 प्रतिशत अधिक है। निजी क्षेत्र की बीमा कंपनी की आय दिसंबर 2016 में 4,775.35 करोड़ रूपये थी। यह बढ़ोतरी दूसरा–तीसरा कुछ नहीं बल्कि किसानों के खून पसीने की लूट है। फसल का नुकसान 50 प्रतिशत से कम रहने से बीमा नहीं देते। 2016–17 में फसल बीमा योजना में 20,478 करोड़ रूपये सरकार ने बीमा कंपनियों को प्रीमियम यानी बीमा के तौर पर दिए। कंपनियों ने 5,650 करोड़ रूपये किसानों को बीमा के रूप में दिए और 14,828 करोड़ रूपये कंपनियों ने हड़प लिए।

कृषि सिंचाई : आर्थिक सुधार की नीति वर्ग पक्षपाती रही है। यानी यह छोटे, सीमांत और गरीब उत्पादकों के विरोध में ही रही है। इसलिए कृषि क्षेत्र के लिए पैसे के आवंटन कम होने के साथ–साथ सिंचाई, परियोजनाओं के लिए भी आवंटन कम हो गई है। देश की 16.2 करोड़ हेक्टर कृषि क्षेत्र में से केवल 4.5 करोड़ हेक्टर जमीन को ही सिंचन की

व्यवस्था उपलब्ध है। तमाम पूरे और आधे अधुरे स्रोतों को भी जोड़ने से 34.5 प्रतिशत से ज्यादा सिंचन नहीं है।

बड़े बांध जिसका निर्माण सिंचाई के नाम से किया गया उसमें से धान, गेंहू, गन्ना जैसे मुख्य फसलों को भी पानी न देकर कार्पोरेट कम्पनियों—कारखानों और कार्पोरेट पानी व्यापार कम्पनी के लिए बड़े पैमाने पर दिया जाता है। देश के 60 प्रतिशत हिस्से पर बारीश के भरोसे से ही खेती होती है। वर्ष 2018 में सरकार ने कृषि सिंचाई योजना पर 2,600 करोड़ रूपया खर्च करने की बात कही है, लेकिन देशभर में जो अधुरी पड़ी सिंचाई योजना है उसे ही पूरा करने मे चार लाख करोड़ रूपयों की जरूरत है।

सिंचाई की परियोजनाओं को घोषणा करना, उसके लिए बजट अलाट करना, फिर वह पैसा गबन करना यह हर सरकार करते आया है। उदाहरण के लिए, पिछले 15 साल में महाराष्ट्र में सिंचाई पर 76 हजार करोड़ रूपये खर्च हुए हैं पर सिंचाई क्षेत्र में एक प्रतिशत की भी बढ़ोतरी नहीं हुई, इससे समझ सकते हैं कि भ्रष्टाचार कितना गंभीर स्तर तक है। गोसीखुर्द परियोजना का उदाहरण सिंचाई विभाग का भ्रष्टाचार समझने के लिए काफी है। यह देश के 15 प्रमुख राष्ट्रीय सिंचन परियोजना में से एक है। इसको 31 मार्च 1983 में शुरु किया और यह 31 मार्च 1995 में पूरा होना था पर अब तक केवल 29.68 प्रतिशत काम ही पूरा हुआ। इसका खर्च 372 करोड़ 22 लाख रूपये था जो 4 हजार 968.70 प्रतिशत से बढ़कर 18 हजार 494 करोड़ 57 लाख रुपये हो गया है और यह सरकार दर सरकार बढ़ते जा रहा है। 'जलयुक्त शिवार' यह महाराष्ट्र की योजना अपने आप में अच्छी योजना लगती है। पर यह कोई नई बात नहीं है। पहले के काँग्रेस सरकार की लंबे अरसे से चलती आ रही 'पानलोट' या 'पाणी अडवा पाणी जिरवा' यह योजनाओं का ही नया नाम है। दरअसल जलयुक्त शिवार के पीछे सोलार पंप सिंचाई की योजना है। इससे हर साल 5 हजार गांव अकाल मुक्त करने की बात कर रहे हैं। लुभावने स्टेटमेंट देने में भाजपाई कभी पीछे नहीं है। 1995 में इसी तरह शिवसेना—भाजपा के सरकार के समय उस समय की जल मंत्री शोभाताई फडणविस ने महाराष्ट्र को टेंकर मुक्त कर दिया ऐसा दावा किया था, ठीक उसी साल सैकडों गांव पानी के लिए तरस रहे थे। अब वह बेशुमार कुएँ खोदकर सिंचाई करने की सोच रहे हैं। जमीन से कुएँ का पानी निकालकर सिंचाई करने की पद्धति को महाराष्ट्र में दस साल पहले ही रोक लगाई गई थी। वैज्ञानिकों ने चेतावनी दी थी कि यह सिंचाई की पद्धति महाराष्ट्र के लिए खतरनाक है, क्योंकि जमीन के पानी का

स्तर तेजी से गिरता जा रहा है। आज की स्थिति में जमीन का स्तर खतरे के एक मिटर नीचे गिर चुका है। आज पानी के स्तर का बिना आंकलन किए धड़ल्ले से कुएँ खोदने की बात कर रहे हैं। यह महाराष्ट्र को एक खतरनाक सुखे की ओर और भुकंप के तरफ धकेल रहे हैं। जो जलाशय/तालाब बन रहे है या बने है उसका पानी कारखानों को दिया जा रहा है। नदियों को प्रदूषित किया जा रहा है। फडणविस के जलयुक्त शिवार के पीछे किसानों को मिलने वाली बिजली को बंद करने की योजना है। चुंकि भाजपा सरकार की विकास की दारोमदार कृषि पर आधारित नहीं है बल्कि उद्योगों पर आधारित है। और वे उद्योग विदेशी पूंजी पर आधारित है। विदेशी पूंजी को चाहिए मूलभूत सुविधाएं। बिजली इसमें से एक है। फडणविस की नजर किसानों को सस्ते दाम में दिए जानेवाली बिजली पर है। वह यह बिजली कारखानों को देना चाहते हैं। उसके बदले में किसानों को सोलार पंप देंगें ऐसी घोषणा की। इसमें फडणविस एक पत्थर से चार निशाने साधेंगे। **एक तो,** कारखानों को बिजली देंगें, फडणविस खुल्लम–खुल्ला कह रहा है कि, किसानों को सब्सिडी देने से कारखाने के लिए बिजली की दर बढ़ जाती है। इस कारण कारखाने प्रतिस्पर्धा में पिछड़ जाती है। इसलिए उद्योगों को सस्ती बिजली देना जरूरी है। सीधा जाहिर है कि नाम किसानों का पर फायदा पूंजीपतियों का। **दूसरा,** सोलार पंप देने के नाम से कंपनियों को सरकार एक सुरक्षित मार्केट देगा। **तीसरा,** बैंक पूंजी को घुंमाने के लिए एक नया चक्र तैयार होगा और **चौथा,** किसानों के लिए बहुत कुछ कर रहे इसकी वाहवाही प्राप्त करेंगे। पर अब यह सारा धरा के धरा रह जायेगा क्योंकि इसमें भी भारी भ्रष्टाचार की खबरे आने लगी है।

'अच्छी प्रशासन' (गुड गव्हर्नन्स) का दावा करने वाली मोदी सरकार की पोल कावेरी जल विवाद ने खोलकर रख दी। उसे हल नहीं कर पाए जिसके कारण दोनों तरफ के किसानों का 25,000 करोड़ रूपयों का नुकसान हुआ था।

कंपनीयों एवं व्यापारी लॉबी के पंजे में किसानों की गर्दन : दूसरी 'हरित क्रांति' के नाम पर कॉन्ट्रक्ट फार्मिंग, कार्पोरेट फार्मिंग, कृषि यंत्रिकरण, तंत्रज्ञान, अनुवंशिक रूप से विकसित (जेनेटीकल मॉडीफाईड–जीएम) फसलों को लाया जा रहा है। यह फिर मोन्सेन्टो, वॉलमार्ट जैसी साम्राज्यवादी कंपनियों को ध्यान में रखकर नीति बनाई जा रही है। इससे किसानों की कंपनियों पर निर्भरता और बढ़ेगी और जैव विविधता भी प्रभावित होगी। भूगर्भ में जल स्रोत घटकर पानी की स्तर घटेगी। फ्रान्स, जर्मनी

सहित यूरोप के 19 देशों में जीएम खेती पर प्रतिबंध है। अमेरिका में जीएम लेबलिंग अनिवार्य है। बिटी (एक फसल के लिए इस्तेमाल करने वाली बीज) बीजों को कई विकसित देश प्रतिबंधित किए है पर वही बीज भारत आयात कर उसे विकास कह रहे हैं। 9.4 प्रतिशत प्रमाणित बीज, 9.8 प्रतिशत हायब्रिड बीज और 27 प्रतिशत अधिसूचित किस्म के बीज इस्तेमाल किए जा रहे हैं। विदर्भ में किसानों पर दवा कंपनियों के द्वारा एक और हमला हुआ। कीटनाशक दवा के छिड़काव से 32 किसान मरे (यवतमाल में 21), 23 की रौशनी चली गई और 800 गंभीर बीमार हुए। 46,000 करोड़ रूपये खर्च कर मुंबई—नागपूर समृद्धि (एनएमएससीईडब्लू) मार्ग फडणविस बना रहे है। इसमें 10,000 हेक्टर जमीन जानेवाली है।

कॉन्ट्रक्ट फार्मिंग, कार्पोरेट फार्मिंग, ग्रुप फार्मिंग : कॉन्ट्रक्ट फार्मिंग, कार्पोरेट फार्मिंग यह विदेशी बड़ी व्यापारिक कंपनी और देश के अंबानी, टाटा जैसे बड़े दलाल नौकरशाह पूंजीपतियों की कंपनियों के हित में है। वे किसानों की जमीन को ठेका लेकर उसपर अत्याधुनिक तकनिक से उत्पादन ले रहे हैं, वह सीधा उनके माल्स में भेज रहे हैं, उनके फेक्टरियों में भेज रहे हैं और वहाँ खाद्य पदार्थों का उत्पादन करते हुए बड़े कीमतों पर मार्केट में बेच रहे हैं। इसलिए कृषि मार्केट में बदलाव यह कोई किसानों को दलालों से बचाने नहीं हैं बल्कि कंपनियों के लिए कृषि मार्केट के आड़े आने वाले कानूनों को बदलने के लिए है, उन्हे सस्ते में कच्चा माल उपलब्ध कराने के लिए है। इसके द्वारा खेत के मालिक किसान को उनके ही खेत पर मजदूर में तब्दील किया जा रहा है।

ग्रुप फार्मिंग यह किसानों के बदहाली का इलाज नहीं बल्कि बैंक के कर्जों को वापसी की गारंटी करने वाला कदम है। व्यक्तिगत तौर पर कर्ज देने से रिटर्न की गारंटी नहीं है इसलिए किसानों के गुट को कर्ज दिया जायेगा। अंत में सारा दारोमदार उत्पादन पर है। व्यक्तिगत कर्ज की सफाई याने सात—बारा कोरा किए बिना, कृषि की बुनियादी समस्या को हल किए बिना किया जानेवाला यह प्रयोग किसानों की थोक भाव में दिवालिया के तरफ और सामूहिक आत्महत्या के तरफ इशारा कर रहा है।

मेगा फुड पार्क में 850 करोड़ निवेश करने वाले हैं। बीजेपी की वित्तीय जीवन रेखा अदानी, आयटीसी, फ्यूचर इनके भरण—पोषण के लिए है।

फूल उत्पादन, मछली उत्पादन, मुर्गी पालन इसमें बड़े किसान और कार्पोरेट कंपनियों ने कब्जा कर लिया है। दुग्ध व्यवसाय में पारंपारिक रूप

से बहुत से किसान है पर उसमें भी कार्पोरेट कंपनियों की घुसपैठ हो गई है और दूध का मूल्य भी लागत के अनुपात में नहीं मिल पा रही। इसलिए आक्रोशित किसानों पर दूध उडेलने की नौबत आती है। एक्सपोर्ट बासमती के नस्ल GW-322 और GW-366 का उत्पादन लेना साधारण किसान के बस की बात नहीं रही। यह केवल बड़े धनी किसान और जिन्होंने कृषि कंपनियाँ बनाकर बड़ी दलाल कंपनियों के मूल्य संर्वधन श्रंखला (व्हॅल्यू ॲडेड चैन) में खुद को जोड़ा है वहीं कर पा रहे हैं। कुल मिलाकर बड़ी मछली के कृपा दृष्टि पर छोटी को जीना है।

दलहन–तिलहन : दलहन–तिलहन की दूर्दशा सरकारी नीति का ही परिणाम है। 1986 में ऑयल ॲन्ड सीड्स टेक्नॉलॉजी मिशन शुरू किया था, 1994 तक देश खाद्य तेल में आत्मनिर्भर बन गया था, पर फिर विश्व व्यापार संगठन के आगे झुकने से पतन शुरू हुआ। खाद्य तेल पर 300 प्रतिशत के आयात शुल्क लगभग शून्य कर दिया लिहाजा खाद्य तेल के प्रोसेसिंग युनिट बंद करने पड़े और किसानों ने तिलहन उगाना उल्लेखनीय स्तर पर कम किया। नतिजतन आज भारत 67 प्रतिशत खाद्य तेल आयात करता है जिसके लिए 70,000 करोड़ रूपयों की जबरदस्त लागत आती है। परिस्थिति हाथ से बाहर जाने के बाद अब दलहन–तिलहन आत्मनिर्भरता की बात कर रहे हैं जो बेमानी है।

दलहन की फसल उगाने हेतू 2016 में किसानों को कहा गया था किसानों ने भरपूर फसल उत्पादन किया पर उन्हे उनके लागत का दाम भी बराबर नहीं मिला। दलहन खासकर तुवर के दाम 5,500 रूपये क्विंटल से 3,500 रूपये तक गिर गए और इस तरह किसानों के साथ छल किया गया। तुवर के दाम जहां 200 रूपये किलो हो गए थे तब सरकार के आवाह्न पर किसानों ने दलहन के उत्पादन को महत्व दिया। 2016–17 में यह 37 प्रतिशत बढ़कर 224 लाख टन पर पहुंच गया पर किसानों को उचित दाम नहीं दिया गया। दलहन का आयात भी 20 प्रतिशत बढ़ाकर 57 लाख टन हुआ, आयात 10 हजार 114 रूपये प्रति क्विंटल से हुआ पर देश के किसानों के प्रति क्विंटल 3 हजार रूपये भी भाव नहीं दिया गया। वही हाल प्याज का है जिसकी उत्पादन लागत 800 से 1000 रूपये प्रति क्विंटल है और वह मार्केट मे 2 और 3 रूपये किलो सिजन में बीक जाते हैं।

इसी तरह गेंहू आयात के मामले में भी दिखता है। 2016 सितंबर में गेंहू का आयात शुल्क 25 प्रतिशत से घटाकर 10 प्रतिशत किया और 8 दिसंबर

को 10 प्रतिशत से शून्य किया और 35 लाख टन का आयात किया। गौरतलब है कि अंतरराष्ट्रीय बाजार में गेंहू के दाम 210 से 235 डॉलर प्रति टन चल रहा है जो भारत की तुलना में बहुत कम है। जाहिर है यह व्यापारियों को मुनाफा कमाने के लिए किया गया है। देश को 8.70 करोड़ टन गेंहू की आवश्यकता है और उत्पादन 9.35 करोड़ टन है। यानी आयात की कोई आवश्यकता नहीं, फिर भी साम्राज्यवादी कंपनियों के मुनाफे के खातीर गेंहू का आयात किया जा रहा है। इससे किसान हाशिये पर चले गए। पर्याप्त उत्पादन रहने के बाद भी आयात करना किसान विरोधी है। सीजन के अनुसार व्यापारी लॉबी के हित के मुताबिक आयात पर टैक्स घटाना बढ़ाना, आयात करना या खरीदी रोकना सरकार की ओर से किया जा रहा है। इसमें न तो देश की जरूरत है न ही किसानों की आर्थिक वृद्धि की बात।

दलवाई समीति की रिपोर्ट के मुताबिक मुद्रास्फिती पर अंकुश लगाने के लिए खाद्यान्न का आयात करने के सरकार के कदम ने किसानों के घरेलू बाजार को प्रभावित किया। हर साल फल–सब्जियाँ नहीं बिक पाने के कारण किसानों को 63,000 करोड़ रूपये का नुकसान होता है। यह रकम उस रकम के 70 प्रतिशत तक होती है, जो इसको बचाने के लिए जरूरी मूलभूत सुविधा निर्माण करने के लिए लग सकती है।

इलेक्ट्रॉनिक राष्ट्रीय कृषि बाजार (ईएनएएम) कृषि उत्पादन और जिंसों के लिए जरूरी बनाया। फल और सब्जी जैसे उत्पाद को कृषि उत्पादन बाजार समीति (एमपीएमसी) के सूची से बाहर रखा। इसको कहा जा रहा है कि किसानों का दलालों, अडतियों से छुटकारा पाने के लिए किया गया, यह सरासर झूठ है। दरअसल यह फिक्की और सीआईआई जैसे भारतीय उद्योग संघ के सुझावों पर यह कंपनियों के हित के लिए किया गया है। यह विश्व की सबसे बड़ी व्यापारिक अमेरिकन कंपनी वॉलमार्ट को भारत के बाजार में घुसपैठ के लिए रास्ता खुला करने के लिए किया गया है।

'कृषि उत्पादन बाजार समीति' इसपर सहकारी समीतियों के सम्राटों का वर्चस्व है। बैंको के प्रतिनिधि और दलाल व अडतियों का यह अड्डा है, गौरतलब है कि कृषि के नाम पर यह बाजार है पर इसके संचालक मंडल को चुनने का अधिकार किसानों को नहीं है।

मौत के सौदागर : मोदी की नीतियों से उत्पन्न जीवनयापन चलाने की समस्या, बच्चों की पढ़ाई, स्वास्थ देखभाल, शादी–ब्याह, और जीवन की

सारी क्रिया पूरी नहीं करने के कारण किसान टुट जा रहा है और हताशा और निराशा में आत्महत्या कर रहे हैं। 1991–2018 3,030,00 से अधिक किसान आत्महत्या किये। मोदी के शासन में किसानों की आत्महत्याएं तीन गुणा बढ़ोतरी हुई। ग्रामीण भारत के किसान परिवार में प्रतिदिन 174 और प्रति घंटे में 7 आत्महत्याएँ हो रही है। एनसीआरबी ने पिछले 15 साल में हुए किसान आत्महत्या के आकड़े जारी किए हैं उसके मुताबिक महाराष्ट्र में 56,215, छत्तीसगढ़ में 16,153 और मध्यप्रदेश में 19,778 किसान आत्महत्याएँ कर चुके हैं।

संयुक्त राष्ट्रीय के खाद्य और कृषि संगठन (एफएओ) के अनुसार हमारे देश में 90 लाख किसान 2001–2011 के दरमीयान किसानी छोड़ कर गए। मोदी के चार साल शासन में 50,420 किसान आत्महत्या कर चुके हैं (2014–15 में 12,360; 2015–16 में 12,602; 2016–17 में 11,458; 2017–18 में 14,000)। केवल महाराष्ट्र में ही 12 हजार किसान आत्महत्या किए हैं। मई 2017 में खुद सरकार ने सुप्रिम कोर्ट में कहा कि कृषि क्षेत्र में हर साल 12 हजार से ज्यादा लोग आत्महत्या करते हैं।

अनाज की बर्बादी, रीकॉर्ड स्तर पर उत्पादन और भुखमरी : भारत में 275.7 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पादन हो रहा है, फिर भी 58 प्रतिशत किसान भूखे सोते हैं। 45 करोड़ भारतीय गरीबी रेखा के नीचे जी रहे हैं। सेन्ट्रल इन्सिटयूट ऑफ पोस्ट हारवेस्टिंग इंजिनिअरिंग एंड टेक्नालॉजी ने रिपोर्ट जारी की कि देश में प्रतिवर्ष औसतन 92 हजार 651 करोड़ रूपये का अनाज और 31 करोड़ रूपये की सब्जी को सरकार ने बर्बाद कर रही है। क्योंकि उनके पास भंडारण की व्यवस्था नहीं है। विश्व की बड़ी शक्ति बनने के सपने देखने वाले भारत के शासक, सत्तर सालों में खाद्यान्न रखने के लिए पर्याप्त गोदाम नहीं बना पाए, गोदाम और शीतगृह निर्माण नहीं कर पाए। इस कारण हजारों टन अनाज हर साल सड़ जाता है। 2011–12 से 2016–17 के बीच 61 हजार 824 टन अनाज बर्बाद हो गया है। 2016–17 में देश में 8,679 टन अनाज बर्बाद हो गया जिसमें अकेले महाराष्ट्र में 7,963 टन बर्बाद है।

राज्यों के कृषि कार्यक्रम :

(देशभर में विभिन्न राज्यों में कृषि संकट की गंभीरता को समझने के लिए उपलब्ध कुछ राज्यों के ब्यूरा उदाहरण के तौर पर यहां दे रहे हैं)

महाराष्ट्र : किसानों के लिए 'व्हॅल्यू ॲडेड चैन' और 'जलयुक्त शिवार' यह दो योजनाएं जाहिर की है। इन दोनों योजनाओं में किसान एक माध्यम है असली फायदा पूंजीपतियों को है। व्हॅल्यू ॲडेड चैन में किसान के बोने से लेकर उत्पादन खरीदने तक की चैन विदेशी कंपनियों के साथ बनाई है। ऐसी 25 लाख चैन बनाई जा रही है। 5 लाख बना चुके है। यह चैन मौजूद कृषि उत्पादन बाजार समीति के समांतर रहेगी या उसे नष्ट कर देगी। यहां उल्लेखनीय है कि महाराष्ट्र में कृषी उत्पादन बाजार समीतियों का जाल इसलिए बनाया गया था कि किसानों के उत्पादन और उसके दाम की गारंटी हो और इसपर सरकार का नियंत्रण हो ताकि साहुकार और सटोरीए के हाथों होनेवाले किसानों के शोषण को रोका जा सके। फडणविस ने तो किसानों को अब अंतरराष्ट्रीय स्तर के सटोरियों के हाथों में सौंप दिया है। सरकारी नियंत्रण या निजी इसके अलावा इनके पास कोई विकल्प नहीं है।

कुल मिलाकर 'व्हॅल्यू ॲडेड चैन' और 'जलयुक्त शिवार' या सोलार पंप यह किसानों को बदहाली से बाहर नहीं निकालेगी बल्कि एक नये जाल में फंसायेगी। इसी के लिंक में 'कृषि समृद्ध योजना' की घोषणा की है। किसानों के गुट बनाकर उनको कर्ज देकर उत्पादन करने की पद्धति ला रहे हैं। गांव में कृषि आधारित उत्पादन किया जायेगा, गांव में माल का गोदाम (वेअर हाउस) बनायेंगे, हर गांव को 50 लाख देंगे, फसल बीमा, जो चाहेगा उसे कुंआ ऐसा बड़ा सपना संजोएगा। दरअसल यह विदेशी कृषि कंपनियों के लिए तैयार किया गया नया चारागाह और नीति है।

अकाल से राजनेता और व्यापारी मालामाल होते है अकाल सभी लुटेरों के लिए सौगात लेकर आता है। अकाल के नाम से नेता लाखों, करोड़ो रूपए गबन कर सकते हैं, व्यापारी गोदामों में दबा माल मनमाने दामों पर बेचकर कमाते हैं और इस लिंक में नौकरशाही भी बहुत कमा लेती हैं। राज्य में 228 तहसिलों में 19 हजार से भी ज्यादा गांवों में अकाल रहता है। पिछले साल के अकाल के वक्त कम से कम 6000 करोड़ रूपए की जरूरत थी वहाँ 2000 करोड़ रूपए दिए जो ऊंट के मुहँ में जीरा के बराबर है। उसमें भी वितरण की तिकड़म बाजी ऐसी है कि पिछले बार की पूरी रक्कम अकाल पीड़ितों को मिली ही नहीं और 500 करोड़ सरकार के खाते में वापस जमा

हो गई। अब इसे प्रशासनिक कमजोरियां बता रहे हैं। क्या वास्तव में प्रशासनिक कमजोरी है या यह किसानों के साथ किया जानेवाला छल है? यदी प्रशासनिक कमजोरियों की बात होती और सरकार वाकय किसानों के प्रति गंभीर होती तो अबतक संबधित अधिकारियों पर कार्रवाइयां की गई होती। पर ऐसा नहीं हुआ। यह वास्तविक में एक राजनीतिक तमाशा (स्टंट) है कि जब आत्महत्या का माहौल मीडिया में गरम रहता है और किसान आंदोलन में उतारू हो जाते हैं तब मदद की घोषणा करना और राजनीतिक रोटी सेंकना होता है। फडणविस सरकार का ध्यान भी मोदी की तरह कार्पोरेट वर्ग को मुनाफा पहुंचाने के लिए और उनकी पूंजी के चक्र को घुमाने के तरफ है।

मध्यप्रदेश : प्रदेश के जीडीपी में 30 प्रतिशत से भी ज्यादा हिस्सा कृषि का है और यह महत्वपूर्ण वोट बैंक भी है। 7.26 करोड़ जनसंख्या में 26 प्रतिशत किसान और 21 प्रतिशत खेत मजदूर है। राज्य में 450.6 लाख टन कृषि उत्पादन दर्ज करने के बावजूद किसान आंदोलित है। क्योंकि यह विकास वास्तविक किसानों का नहीं बल्कि कार्पोरेट कृषि कंपनियों का है जो किसानों के नाम पर है। नोटबंदी का मार झेल चुके किसान फसल के सही दाम नहीं मिलने के कारण आंदोलित हुए हैं। मध्यप्रदेश में किसानों के ऊपर शिवराजसिंह चौहान सरकार ने मंदसौर जिले में गोली चलाकर 6 किसानों को मौत के घाट पर उतार दिया और कइयों को घायल किया। कृषि में कार्पोरेट और कॉन्ट्रक्ट फार्मिंग की पॉलिसी जोरो से अमल करने से कृषि कंपनियों के उत्पादन बढ़े है उसको किसानों की तरक्की बताकर मुख्यमंत्री वाहवाही लूट रहे हैं। पाँच साल तक 'कृषि कर्मन अवार्ड' लिए हैं जबकि 2001 से 2015 के बीच 18,000 किसान प्रदेश में आत्महत्या कर चुके हैं। फरवरी 2016 से फरवरी 2017 तक 1,982 किसान आत्महत्या कर चुके है। प्रदेश में हर पांच घंटे में एक किसान आत्महत्या कर रहे हैं।

अत्याधुनिक मशिनों के इस्तेमाल के लिए 200 गांव को यंत्र–दुत के तौर पर चुना, नर्मदा से लगे इलाकों में बासमती की खेती शुरु की GW-322 और GW-366 उगाना चालू है, मध्य प्रदेश देश का दूसरा गेंहू उत्पादक बन गया है, 150 रु क्विंटल बोनस, बिजली 6.7 अरब युनिट से 16.1 अरब युनिट खपत हुई, राज्य सहकारी बैंक का कर्ज का ब्याज दर शून्य पर ले आए, 2004–05 और 2014–15 के बीच उर्वरक का विनिमय प्रति हेक्टर 52.5 किग्रा/हेक्टर से 82.4 किग्रा तक और बीज का विनिमय में 14.5 लाख

क्विंटल से 31 लाख क्विंटल वृद्धि आयी। किसानों के लिए 70 लाख किसान कार्ड और 45,000 करोड़ रूपये कर्ज वितरण की गयी। सुरजधारा, अन्नपूर्णा योजना उन्नत बीज उपलब्ध कराती। भावांतर योजना कीमतो में अंतर का भुगतान करती। ऊपरी तौर पर यह देखने से भलेही उपलब्धी दिखती हो पर यह कार्पोरेट कंपनियों, जमीनदारों और कुछ धनी किसानों की उपलब्धी है। आम किसान बदहाली में ही जी रहा है। भावांतर योजना छलावा साबित हो रही है। एक तो पंजीकरण और अन्य अवरोध इतने है कि किसान उस योजना तक पहुँच ही नहीं पाता। राज्य में 85 लाख किसान है और पंजीकरण मात्र 19 लाख किसानों का ही हुआ है। किसानों के उत्पादन को सरकार स्वयं भंडारण के लिए खरीदेगी। लेकिन यह सभी फसलों के लिए नहीं है केवल आठ फसलों के लिए है। उदाहरण के लिए, उड़द का समर्थन मूल्य 5,400 रूपये प्रति क्विंटल है पर बिका 2,200 रूपये में इनको भावांतर नहीं मिला। मध्यप्रदेश कृषि विकास का मॉडल नहीं यह किसानों के बर्बादी का मॉडल है।

छत्तीसगढ़ : छत्तीसगढ़ में भी किसान आत्महत्या प्रमुख मुद्दा बन चुका है, जहां मई–जून माह में टमाटर को उचित मूल्य नहीं मिलने के कारण, किसानों ने सड़कों पर टमाटर फेंककर विरोध जताया। वहीं हर अगस्त माह में 100 रूपये किलो टमाटर बिकता है। किसानों के उत्पादन को रखरखाव के लिए कोई उचित मूलभूत संरचना रमनसिंग सरकार नहीं बना सकी।

धान का मूल्य 2,100 रूपये प्रति क्विंटल और बोनस 300 रूपये देने की बात की है किन्तु 1,700 रूपये ही मूल्य दिया है। छग में 37 लाख हेक्टर धान की खेती है। मैदानी प्रदेश में प्रति एकड़ 25 से 30 क्विंटल और बस्तर–सरगुजा में 10 से 12 क्विंटल उत्पादन होता है। 37 लाख किसान है पर 13 लाख किसानों को ही बोनस दिया गया है। यह पड़ोसी राज्य से धान खरीदीकर बोनस हड़पने की योजना है। चुनाव को ध्यान में रखकर भाजपा हर बूथ में 10–10 'किसान मितान' बनाने की घोषणा की है, यह पाखंड है।

आंध्रप्रदेश–तेलंगाना : तेलुगु राज्य – आंध्रप्रदेश और तेलंगाना में क्षेत्रीय पार्टियां – आंध्रप्रदेश में तेलुगुदेशम और तेलंगाना में तेलंगाना राष्ट्र समीति पिछले पांच सालों से शासन चला रही है। केंद्र–राज्य सरकारों की सभी योजनाएं किसान विरोधी साबित हुईं। देशभर में कृषि संकट के प्रभाव आंध्रा, तेलंगाना किसानों पर गंभीर है। कर्ज से ग्रस्त अन्नधाता–किसान

आंध्रप्रदेश में 2014 से 2017 तक 2,284 किसान और तेलंगाना में 2015 में 898 किसान और 449 कृषि मजदूर आत्महत्या कर चुके थे।

आंध्रप्रदेश में किसानों के लिए उचित दाम देकर उन्हें मदद देने के नाम पर 5 हजार करोड़ रूपये के साथ दर स्थिरीकरण निधि का गठित करने की वादा चंद्रबाबु ने चुनाव के समय में किया था। सत्ता में आकर 5 साल पूरा हो रही हैं, बावजूद उस वादे अधूरे ही रह गयी। चंद्रन्ना रैतु क्षेत्र, 'खेत बुलाती है' के योजनाएं, किसान सशक्तिकरण संगठन, सलाहकार और मिशन होने के बावजूद किसानों को कुछ नहीं मिला। प्रति एकड़ एक लाख से डेढ़ लाख रूपये तक लागत से किसान मिर्ची उगाए। उसके लिए न्यूनतम निवेश भी नहीं मिलने के कारण किसान निराश है। कपास किसानों का भी यही कड़वी अनुभव रहा। किसान खेत में ठीक से फसल नहीं होने के कारण सीधा फसल को हल चला रहे हैं और आत्महत्या कर रहे हैं। गुंटूर, कृष्णा, प्रकाशम जिलों के मंडियों में अपने उत्पादन नहीं बिकने की वजह से बहुत तकलीफों का सामना करना पड़ा। तेलंगाना के मिर्ची किसान, खम्मम जिले मुख्यालय के मंडी में सरकार के नीतियों के खिलाफ आंदोलन करने के कारण पुलिस ने उन्हें गिरफ्तार किया। किसानों पर सरकार सम्पत्ति का विध्वंस और षड्यंत्र लगाकर उन्हें अपराधियों की तरह हथकड़ियां लगाकर जेल में ठूंस दिया और आंदोलन को कुचल दिया। तेलंगाना केसीआर के नेतृत्व में टीआरएस सरकार किसानों के लिए निवेश और सहयोग देने के नाम पर 'रैतू बंदू योजना' को लागू की। लेकिन यह कृषि करनेवाली काश्तकारियों को नहीं बल्कि साम्पतियों को लाभ पहुंचाया जो जमीनों को किराये के लिए काश्तकारी को देकर शहरों में नौकरी या व्यापार करते हैं। एक या दो एकड़ जमीन होते हुए भी पट्टे नहीं होनेवाले छोटे और सीमांत किसान इस योजना से नाममात्र ही लाभ मिला। मुफ्त बिजली योजना भी सामंतियों के लिए ही मददगार साबित हुई। छोटे और सीमांत किसानों ने इससे कुछ फायदा नहीं हुआ। उन्होंने और खर्च में डुबे हैं। इन तेलुगू राज्य में किसान फसलों के लिए उच्चित मूल्य नहीं मिलने के कारण, खेति का निवेश अधिक होने, उर्वरक बीज का दाम और बिजली का दाम बढ़ने के कारण खर्च में डूब कर तड़प रहे हैं।

किसान संघर्ष : मोदी सरकार सत्ता में आने के बाद पिछले चार सालों में किसान कई आंदोलन किये हैं। दिल्ली, मुम्बाई और विभिन्न राज्यों के राजधानी शहरों में, पंजब महाराष्ट्र, तमिलनाडु, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, छत्तीसगढ़, तेलंगाना, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक राज्यों के लगातार

किसान आंदोलन कर रहे है। सैकड़ों किलोमीटर पद यात्राकर जंतर–मंतर हो रामलिला मैदान हो हर रैली मे लाखों संख्या में किसान संगठित होकर अपनी आवाज उठाई है। कर्जमाफी, स्वामिनाथन आयोग की सिफारिशों को लागू करना, जमीन का पट्टा आदि प्रमुख मांगे है। हाल ही में 29–30 नवंबर 2018 को 208 संगठनों ने मिलकर दिल्ली में रैली की है। इससे पहले भी ऑल इंडिया किसान संघर्ष समन्वय समीति में 194 संगठन शामिल हुई थी और दिल्ली में 'मॉक पार्लमेंट' आयोजित की थी जिसको 'किसान मुक्ति संसद' कहा गया था। दिल्ली के रैली में ही एक किसान ने खुद को फांसी लगा ली थी, मुंबई मे मंत्रालय में ही आत्महत्या करने का प्रयास किया था। भारत बंद, रास्ता रोको, रेल रोको, सप्लाई बंद, आम हड़ताल जैसे आंदोलन लगातार पिछले कुछ सालों में हो रहे हैं। इसे देश के किसानों का सत्ता के खिलाफ और खासकर मोदी के नीतियों के खिलाफ के आक्रोश के रूप में देखा जा सकता है। इसके अलावा कई राज्यों में एक साथ आंदोलन हो रहे हैं। कहीं–कहीं फसल के इलाके मे सिजन में उचित मूल्य के लिए आंदोलन हो रहे। कपास, धान, गन्ना, प्याज, टमाटर, दालें इन फसलों के उत्पादन के समय किसान कमाई की ज्यादा आस लगाए बैठे रहते हैं। और बाजार पर नियंत्रण रहने के बावजूद ठीक सिजन में माल के भाव गिराए जाते हैं।

शिवराज सिंह चौहान जब मुख्यमंत्री बने तब मध्यप्रदेश के किसानों पर 2,000 करोड़ रूपये कर्ज था (किसान क्रेडिट कार्ड)। जो आज बढ़कर 44,000 करोड़ रूपये हो गया है। प्रदेश के किसान संकट में है और आंदोलित हो रहे हैं। 2017 के आंदोलन में किसानों का गुस्सा फूट पड़ा, 200 से ज्यादा गाडियां जला दिए। नरेन्द्र मोदी और शिवराज सिंह के पुतले जलाये। पुलिस फायरिंग मे मंदसौर जिले के पिपलिया मंडी में 6 किसानों की मौत हुई है। इसमें एक घनश्याम धनक्कड जिसकी पुलिस के द्वारा बेरहमी से पिटाई से मौत हुई है। लेकिन बेशर्म शिवराज सिंह किसानों को असामाजिक तत्व बताकर निंदा की है। आंदोलन शिवकुमार शर्मा उर्फ कक्काजी कर रहे थे और शिवराज ने आरएसएस के भारतीय किसान संघ के नेताओं के साथ बातचीत कर आंदोलन समाप्ती की घोषणा कर किसानों को ठगाया। किसानों के आक्रमक तेवर देखकर पहले मृतकों को 5 लाख, फिर दस लाख और फिर 1 करोड़ रूपये की मदद की खैरात ऐलान की। मृतकों के परिजनों ने शिवराज को करारा जवाब देते हुए कहा कि ''हम दो करोड़ देते है आपके परिवार को मारने देते क्या?'' किसानों का आंदोलन मंदसौर से रतलाम, नीमच, उजैन, शाजापूर, खरगौन, खंडवा, देवास, धार, सिहोर, सतना, रीवा,

जबलपूर में फैला था। मंदसौर गोलीकांड के बाद अब 3 अक्टूबर 2017 को टीकमगढ़ जिले में कलेक्टर को ज्ञापन देने गए किसानों को पुलिस ने कलेक्टर से मिलने नहीं दिया, उन्हे पुलिस थाने ले जाकर कपड़े निकालकर बुरी तरह पीटा गया। 5 साल से 20 प्रतिशत की कृषि वृद्धि दर और पुरस्कार लेने वाले मध्यप्रदेश में किसान आत्महत्याएँ जारी है और किसानों को पुलिस द्वारा गोलियों से उड़ाया जाता है।

किसानों के आंदोलन और उस पर दमन, सुखा घोषित करना, कर्ज माफी, तीन साल का बोनस भुगतान, स्वामिनाथन आयोग का अमल आदी विषयों पर संकल्प यात्रा करने वाले किसानों की राजनांदगांव में गिरफ्तारी किया। आंदोलन को शुरूआत के पहले ही उन्हें कई बार गिरफ्तार किया जाता है, इसके बावजूद भी किसान रास्ते पर आकर आंदोलन करते हैं।

मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र और छत्तीसगढ़ में किसानों ने रास्ते पर टमाटर, सब्जियाँ फेंककर और दूध उडेलकर सरकार के सामने अपने विरोध जताया। किसान के उग्र आंदोलनों में गाड़ियाँ और नेताओं के पुतले जलाकर किसान अपने विरोध व्यक्त किया। तामिलनाडु के किसानों ने अपनी अर्थियाँ निकालकर, कंकालों को गले में लटकाकर, चुहें खाकर, घास खाकर, नंगे होकर, आमरण उपोषण करते हुए तरह–तरह के तरीके से सरकार का ध्यान आकर्षित करने के लिए प्रदर्शन किए। पर, उनकी नहीं सुनी गई। इससे उन्हों आत्महत्या करने के सिवा बेहतर जिंदगी मिलने की कोई यकीन नहीं मिल रही है। खुद की मेहनत को रास्ते पर फेंककर नष्ट करने की दिशा सही नहीं है। अपने किसानों के आक्रोश को शासन का चक्का जाम करने के तरफ आंदोलन को क्रमशः तेज करना चाहिए। दरअसल सभी उत्पीड़ित किसान जनता के कष्ट व तकलीफों के लिए मुख्य कारण साम्राज्यवाद बहुराष्ट्रीय–देशीय कार्पोरेट कंपनियों के हितों को, भारत के दलाल नौकरशाह पूंजीपति और बड़े सामंती शासक वर्गों के हितों को पूरा करने के लिए, भारतीय राजसत्ता द्वारा 1991 से लागू उदारीकरण, निजीकरण और वैश्वीकरण नीतियां ही है। साम्राज्यवादियों, खासकर, अमेरिकी साम्राज्यवादियों के नेतृत्व में अंतरराष्ट्रीय वित्तीय कोष (आईएमएफ), विश्व बैंक और विश्व व्यापार संगठन (डब्लुटीओ) द्वारा निर्देशित इन नीतियों को भारत के शोषक–शासक वर्ग द्वारा दिन–ब–दिन तेज करना ही वर्तमान कृषि संकट का मूल कारण है।

किसानों की मांगें राजसत्ता से जुड़ी हुई है। राजसत्ता दलाल नौकरशाह

पूंजीपतियों और बड़े सामंतियों के हाथों में है। चुनावों में जो भी पार्टी जीत हासिल कर सरकार का गठित करते हो, किसानों की दुर्गति नहीं हटेगी, आत्महत्याओं से उन्हें मुक्ति नहीं मिलेगी, पिछले 70 सालों का अनुभव यही है। इसलिए सभी मांगों और समस्याओं जोड़कर देखा जाय तो एक ही केंद्रीकृत लक्ष्य बन जाती है – 'किसानों के हाथों राजसत्ता'। इसलिए किसान हर आंदोलन और हर रैली को राजसत्ता हासिल करने की दिशा में आगे ले जाने और इसके अनुरूप अपनी राजनीतिक चेतना बढ़ाने हमारी पार्टी व्यापाक किसानों का आह्वान करती है।

कृषि संकट का हल–संसदीय बनाम क्रांतिकारी रास्ता : भारत के किसान आंदोलन के दो रूप है – 1. विभिन्न संसदीय राजनीति पार्टीयों के अथवा स्वतंत्र पर संसदीय रास्ते पर चलने वाले 2. भारत की कम्युनिस्ट पार्टी (माओवादी) के नेतृत्व को स्वीकार करते हुए सशस्त्र क्रांति के मार्ग पर चलने वाले।

देश के प्रचार और प्रसार माध्यमों में केवल एमएसपी और कर्ज माफी के लड़ने वाले किसानों के संघर्ष और आत्महत्याओं के आकड़ों का ही जिक्र होता है पर पिछले 50 साल से ''किसानों की सत्ता के लिए'' लगातार लड़ रहे किसानों की बात सुर्खियाँ नहीं बनती और यदी सुर्खियाँ बन भी जाती तो उसे कानून और व्यवस्था के प्रश्न के रूप में पेश किया जाता है। इसके बावजूद भी इन किसानों का दीर्घ आंदोलन देशभर में अपनी मजबूत जड़े जमाकर अपने लक्ष्य के तरफ अग्रसर हो रहा है।

संसदीय रास्ते में पर किसान बार–बार गोलबंद हो रहे हैं। पर वहाँ बार–बार आश्वासनों और छल कपट के साथ अमल में लाए जानेवाले निर्णयों के सिवा हाथ में कुछ नहीं मिल रहा। कृषि सकंट के मामले में भाजपा, कांग्रेस सहित विभिन्न संसदीय पार्टियां वोट बैंक राजनीति करते हैं। संकट को हल करने के लिए स्वामिनाथन आयोग के सिफारिशों को अमल करने और किसानों के कर्जमाफी के नाम पर किसान ठगे जा रहे हैं। कांग्रेस पार्टी एक कदम आगे जाकर लफ्फाजी कर रही है कि वह सत्ता में आने पर किसानों के लिए कर्जमाफी, फसलों के लिए एमएसपी और न्यूनतम आय गारंटी कानून लाएगी। जाहिर है कि काग–2013 के रिपोर्ट में उजागार हुआ कि 2008 में कांग्रेस नेतृत्ववाली यूपीए सरकार ने 5,25,000 करोड़ रूपये के किसान कर्जमाफी के नाम पर कई गड़बड़ियां की। कोई भी बता सकते हैं कि अब वह कर्जमाफी, एमएसपी देने और न्यूनतम आय गारंटी कानून लाने

से भी उन कदमों से किसानों को कुछ मिलना तो दूर, वे पूरे भ्रष्टाचार लिप्त हो जाती हैं। दरअसल भारत के दलाल शासकवर्गों का प्रतिनिधित्व करने वाली सभी संसदीय पार्टियां वर्तमान कृषि संकट का समाधान के लिए सूचित सभी मार्ग सिर्फ सतही पर सीमित है, उनसे किसानों की मौलिक समस्याएं हल नहीं होंगे। भाजपा, कांग्रेस, संशोधनवादी पार्टियों, क्षेत्रीय पार्टियों सहित सभी प्रतिक्रियावादी संसदीय पार्टियों द्वारा सामने लाने वाले स्वामिनाथन आयोग के सिफारिशों में भी कृषि क्षेत्र में सिर्फ कुछ सुधारों का प्रस्ताव है। इनसे कृषि संकट से किसानों की पूरी मुक्ति संभव नहीं है।

स्वामिनाथन आयोग की शिफारिशें क्या है? : 2004 में कृषि वैज्ञानिक स्वामिनाथन के नेतृत्ववाली आयोग द्वारा कृषि की समस्या पर बनाई रिपोर्ट में निम्न लिखित सिफारिशें शामिल हैं :

- जमीन, पानी अन्य जैविक संसाधन, कर्ज, बीमा, तकनिक और वैज्ञानिक जानकारी तथा बाजार की गारंटी से उपलब्धता करना।
- कृषि विषय को राज्यघटना की केन्द्र और राज्यों की समायिक सूची में लिया जाय।
- पड़िक जमीन का वितरण, कृषि की सुपिक जमीन और जंगल जमीन गैर कृषि कार्य में नहीं देना, कौन से हंगाम में क्या फसल लेना है इसका मार्गदर्शन देना।
- सिंचन के लिए निवेश, रेनवॉटर हार्वेस्टिंग की सक्ती, दस लाख कुवें रिचार्ज करने कार्यक्रम लेना।
- मृदा टेस्टिंग प्रयोगशाला देशभर निर्माण करना।
- गरीब किसानों को निश्चित कर्ज देना, ब्याज 4 प्रतिशत से नीचे रखना, नैसर्गिक आपत्ति के लिए मदद निधी खड़ा करना, महिला किसानों को किसान क्रेडिट कार्ड देना।
- किसानों का और फसलों का बीमा।
- राष्ट्रीय अन्न सुरक्षा कानून बनाना।
- जैव विविधता के लिए प्रोत्साहन।
- स्वास्थ व्यवस्था, पानी वितरण में समानता, स्वास्थ बीज उपलब्धी, बिटी जैसे प्रौद्योगिकी।
- किसानों के प्रतिनिधि वाले राज्य स्तर पर किसान आयोग।

- किसानों के माल की कीमत स्थिर रहने फंड खड़ा करना, उस दृष्टि से आयात कर लगाना।
- आत्महत्याग्रस्त क्षेत्र में ज्ञान बैठके लेना।
- आत्महत्या के लक्षणों की खोज करने के लिए जागृती अभियान चलाना।
- फसलों के आधार पर संस्था निर्माण करना ताकि एकत्रित निर्णय कर बाजार पर नियंत्रण रख सके।
- समर्थन मूल्य औसतन लागत से 50 प्रतिशत ज्यादा रहना। किसानों का उत्पन्न औसतन सरकारी नौकरदारों के बराबर हो यह देखकर योजना बनाना।

उक्त स्वामिनाथन आयोग की सिफारिशों को देखा जाय तो कोई भी जनवादी प्रेमी ने आसानी से समझ सकते हैं कि उसमें जमीन समस्या को थोड़ा भी छूये बिना देश में मौजूदा शोषणकारी अर्थव्यवस्था के अंदर ही सिर्फ कुछ 'शुद्ध' सुधार लाने का प्रस्ताव है। लेकिन इस तरह के आंशिक सुधारों का भी भारत के दलाल शासक वर्गों का प्रतिनिधित्व करनेवाली भाजपा, कांग्रेस आदि संसदीय पार्टियां अमल न कर किसानों को धोखे दे रही हैं।

क्रांतिकारी रास्ते पर चलनेवाले किसान आंदोलनों के बारे में देखा जाय तो, क्रांतिकारी किसान आंदोलन दिन–ब–दिन अपने संगठन को मजबूत करते हुए किसानों के बदहाली के लिए जिम्मेदार इस लुटेरी व्यवस्था और उसके संचालक दलाली सरकारों को चुनौती दे डाली हैं। नवजनवादी क्रांति का लक्ष्य रखते हुए किसान गांव–गांव, इलाका दर इलाका अपनी खुदकी राजनीतिक सत्ता हासिल करने के लिए जनयुद्ध संचालित कर रहे हैं। पिछले दस सालों से देश के विभिन्न इलाकों में भारी दमन के बावजूद, चारों क्रांतिकारी वर्ग – मजदूर, किसान, मध्यम वर्ग और देशीय पूंजीपति वर्ग – के जनता के साथ नयी क्रांतिकारी जन राजनीतिक सत्ता का निर्माण करते हुए उसका अनुभव ले रहे हैं।

इन इलाकों में किसान कभी आत्महत्या के बारे में नही सोचता, सशस्त्र संघर्ष करते–करते वह खुद एक मजबूत इन्सान बन गया है जो मौत को भी चुनौते देते हैं। यहाँ उसके पास एक सटीक लक्ष्य है, एक सही दिशा है, प्रमाणित हुआ संघर्ष का रास्ता याने दीर्घकालीन जनयुद्ध का रास्ता है, पाँच दशक के सशस्त्र संघर्ष से तपकर निकली हुई मजबूत पार्टी है, और उसके

पास पीएलजीए (जनमुक्ति छापामार सेना) के रूप में सशस्त्र जन सेना भी है जिसका वह खुद भी हिस्सा है। वे खुद दंडकारण्य आदिवासी किसान मजदूर संगठन में लाखों की संख्या में संगठित है। वे बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल, पंजाब, असम में क्रांतिकारी किसान कमेटी के रूप में संगठित है। वे ओड़िशा, छत्तीसगढ़, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, हरियाणा के कुछ इलाकों में किसान मजदूर संगठन के रूप में संगठित है। वे आंध्रा, तेलंगना, तमिलनाडु, केरलम, कर्नाटका में रयतुकुली संगठन के रूप में संगठित है। और जहाँ कहीं किसानों ने सही क्रांति के मार्ग पर चलना शुरु किया वहाँ एक मजबूत हिम्मती और साहसी किसान के रूप में वह परिवर्तित हो रहे हैं। हुआ वे और उनके परिवार में तमाम तकलीफों को झेलकर पार करने का साहस और प्रचंड उर्जा का निर्माण हो रही है। यही वह प्रक्रिया है जिससे एक गरीब और बदहाली में जीनेवाला किसान मजबूत बनकर एक फौलादी संगठित सशस्त्र ताकत बनता है और अपना ''क्रांतिकारी जनताना सरकार'' निर्माण करने के तरफ आगे बढ़ता है।

कृषि संकट–क्रांतिकारी जन सरकारों का अनुभव : केंद्र व राज्य सरकारों के क्रूर व पाशविक चौतरफा व रणनीतिक 'ग्रीन हंट' और 'समाधान' नामक दमनकारी ऑपरेशनों के बीच ही दण्डकारण्य (छत्तीसगढ़ और महाराष्ट्र) में ग्राम, एरिया और जिला स्तर के क्रांतिकारी जन सरकार (आरपीसी) चुनकर काम कर रही हैं। बिहार–झारखंड, आंध्रा–ओड़िशा सीमा इलाका (एओबी) महाराष्ट्र–मध्यप्रदेश–छत्तीसगढ़ (एमएमसी) के इलाकों में ग्राम और एरिया स्तर में कुछ समय तक आरपीसी गठित होकर काम किया। ओड़िशा और तेलंगाना में ग्राम स्तर में गठित होकर काम कर रही हैं। वे अपने दायरे में सामंतवाद विरोधी, साम्राज्यवाद विरोधी वर्ग संघर्षों को तेज करते हुए क्रांतिकारी भूमि सुधारों सहित कृषि कार्यक्रम को अमल कर रहे हैं।

इन आरपीसियों जहां आरपीसी नहीं हैं वहां क्रांतिकारी जन संगठनों ने जनयुद्ध के क्रम में जमीनदारों से जमीन जब्त कर 'जोतनेवालों के लिए जमीन' के आधार पर खेतिहर–गरीब किसान, निचले मध्यम किसानों के बीच जमीन वितरण कर रही हैं। जमीन पर महिलाओं का समान अधिकार कायाम कर रही है। इसमें आदिवासियों और दलितों सहित सभी गरीब और मध्यम किसानों को उच्चित रोजगार उपलब्ध कराने पर गौर कर रही हैं। जमीनदारों और महाजनों का सूदखोरी लूट को उन्मूलन कर किसानों को कर्ज मुक्त कर

रहे हैं। क्रांतिकारी इलाकों में पहले ही जब्त किये गये लाखों एकड़ जमीनों पर जनता खेति करने की तरह क्रांतिकारी जन सरकार की नीति के अनुसार आरपीसियों के नेतृत्व में रक्षा विभाग जनता के लिए सुरक्षा प्रदान कर रही हैं। कृषि विभागों के नेतृत्व में खेति विकास के लिए प्रयास कर रही हैं। इसके तहत विभिन्न तरह के स्थानीय बीज को संरक्षित करते हुए बीजों को पुनरात्पादन करने के अधिकार को कायाम कर रहे हैं। साम्राज्यवाद कार्पोरेट कम्पनियों द्वारा उत्पादन करनेवाली रसायनिक उर्वरक कीटनाशक दवाइयों के दलदली में फंसे बिना धान, गेंहू, मक्काई, कोसरा, मंडिया आदि खाद्यान्न, उड़द, मूंग, अरहर आदि दलहन और कई तरह के साग–सब्जियां फसलों को स्वावलंबी तरीकों पर आधारित होकर खेति करने की तरीके को अमल कर रही है। न्यायपूर्ण काश्तकारी तरीके अमल कर रही है। सहकारी कृषि आंदोलन को विकसित करते हुए कृषि उत्पादन को कई गुणा बड़ा रही है। हर साल किसानों के लिए जरूरतमंद सहकारी पद्धति लागू कर किसानों की जरूरत के मुताबिक देने–फिर वसुल करने ही नीति को अमल कर रही है।

आरपीसियों ने प्राकृतिक संसाधनों और पर्यावरण को ध्वस्त करनेवाली भारी सिंचाई परियोजनाओं, खदानों, बिजली प्लांटों, रिफाईनरी आदि के खिलाफ जनांदोलन निर्माण करते हुए उन्हें रोक रही है। पर्यावरण संतुलता को बचाने के लिए जनता के जरूरतों के मुताबिक ही जंगल काटने की अनुमति देते हुए देश–विदेशी कार्पोरेट कम्पनियों के हितों के लिए उपजाऊ जमीन, जंगली जमीन का आवंटन को और जंगल कटाई को रोक रही है। प्राथमिक शिक्षा, स्वास्थ और न्यूनतम रोजगारी अधिकार, कायाम कर रही है।

क्रांतिकारी जन सरकारों के नेतृत्व में जनता ने सामूहिक–सहकारी कृषि को विकसित कर खुद अपने जीवन स्तर को बेहतर कर रहे हैं। दंडकारण्य में क्रांतिकारी जनताना सरकारों ने (आरपीसियों का स्थानीय नाम) 2011 से हर साल कृषि में उत्पादन बढ़ाने के लक्ष्य से 'भूमि समतलीकरण, मेड़ निर्माण और सिंचाई व्यवस्था निर्माण' अभियानों को केन्द्र–राज्य किराया सशस्त्र बलों के फाशविक हमलों के बीच ही संचालित कर रही है। अभियानों का संचालन के पहले एरिया कृषि वर्कशाप चलाकर ठोस योजनाएं बनाकर अमल कर रही है। इसके लिए जरूर उपकरणों और दैनिक खाद्य सामग्री में कुछ हिस्से जनता स्वेच्छा से एकट्ठा करती है और जरूरतमंद राशी को आरपीसियों द्वारा आवंटित किया जा रहा है। वर्ग के आधार पर संचालित करनेवाली इन

अभियानों में हर साल 2–3 हफ्ते तक रोजाना अवसतन ढेड़ लाख जनता (महिला, पुरूष, बच्चे) सक्रिय और क्रांतिकारी जोश के साथ भाग ले रहे हैं। 2018 में संचालित अभियान में 20,000 एकड़ जमीन को समतल की गई है। 60 मुण्डों और 25 तालाबों को नये सीरे से निर्माण किया गया है। दर्जनों पुराने मुण्डों और तालाबों को रीफेर किया गया है। तालाबों को कुछ जगहों पर नालें निर्माण कर खेतों के लिए सिंचाई सुविधा दी गई।

भारत के दलाल शासक वर्ग कृषि संकट को सुलझा नहीं सकती : किसानों की समस्या और कृषि संकट आकस्मिक रूप से निर्माण नहीं हुई। भारत के दलाल शासक वर्गों ने कृषि को बलिका बकरा बनाकर देश–विदेश के घरानों के लिए सुपार मुनाफे पहुंचाने की नीतियां अमल कर किसान को कभी नहीं बहाली होने की नुकसान किया। देश में साम्राज्यवादी आर्थिक सुधारों को अमल करने द्वारा विश्व आर्थिक संकट से साम्राज्यवाद को बचाने की विफल कोशिश में यह एक हिस्सा है। देश के उत्पीड़ित जनता खासकर व्यापक उत्पीड़ित किसान कोई भी फायदा नहीं होनेवाली, उन्हें हानि पहुंचाने वाली 'विकास' और वीकृत 'विकास' को हासिल के लिए साम्राज्यवादियों खासकर अमेरीका साम्राज्यवादियों द्वारा लागू किये जा रहे विनाशकारी योजनाओं के वजह से ही कृषि संकट गंभीर स्तर तक पहुंच गयी है। जब तक भारत के दलाल शासक वर्गों के हाथों में राज्यसत्ता की बागडोर है यह नीतियाँ बदलने वाली नहीं है, तब तक कितनी भी कर्ज माफी होगी, कितने बार भी एमएसपी बढ़ाकर मिले, चाहे स्वामिनाथन आयोग की पूरी सिफारिशे भी लागू क्यों न किया जाय फिर भी यह केवल फटे हुए कपड़े में एक अन्य टुकड़ा को सिलाई करने जैसा ही होगा। वह कपड़ा फिर फटता ही जायेगा।

किसानों का स्वामिनाथन आयोग के रिपोर्ट को भी उजागर करना चाहिए। इसमें भले ही तत्कालिक रूप से किसानों को मदद देनेवाले कुछ अच्छे सुझाव है पर यह किसानों के दुखों पर मरहम लगाने जैसा है। दरअसल सिर्फ एमएसपी ही किसानों की दुर्गति का कारण नहीं है उसमें भी जो लागत के 50 प्रतिशत न्यूनतम समर्थन मूल्य देने की बात सरकार ने जो माना है वह कैसे धोखेबाजी है वह ऊपर दिया हुआ है। इसलिए किसान सी2 + 75 प्रतिशत यह मांग के साथ अन्य मांगों को भी उठाना चाहिए।

साम्राज्यवाद की दासता करनेवाली भारत के बड़े पूंजीपति और सामंती वर्गों को उनके द्वारा संरक्षित अर्ध औपनिवेशिक अर्ध सामंती व्यवस्था को उखाड़कर, देश में दीर्घकालीन की दिशा में कृषि क्रांति के धुर पर नवजनवादी क्रांति को सफल करना ही इस कृषि संकट का हल के लिए एक मात्र रास्ता है। 'जोतनेवालों के लिए जमीन, क्रांतिकारी जन कमेटियों के हाथों सारे सत्ता' मिलने तक, अर्ध औपनिवेशिक अर्ध सामंती संबंधों को उखाड़कर नवजनवादी व्यवस्था की स्थापना तक यह समस्या की हल नहीं होगी। किसान कितना भी बाधाएं, ज्वार–भाटा और उत्तर–चढ़वों का सामना करने पर भी उन सब को पार करते हुए नई जनवादी भारत की स्थापना के तहत अपने 'क्रांतिकारी जन सरकार' का निर्माण करने की तरफ आगे बढ़ना चाहिए। इस समझ के साथ किसान अपने अंदर मौजूद उर्जा को चिन्हित कर धैर्य व साहस बढ़ाना चाहिए।

किसानों की समस्या को जड़ से खत्म करने का कार्यक्रम :

1. 'जोतनेवाले के लिए जमीन' के आधार पर जमीनदारों के जमीन, खेतिहर–गरीब किसानों के बीच वितरण करने की मांग को केंद्र बनाकर, किसानों के तात्कालिक माँगों पर उन्हें गोलबंद करना है और जुझारू संघर्षों का निर्माण करना है। किसानों के आंदोलन के मदद में तमाम जनवादी और जनता के पक्ष में रहने वाले शक्तियों को गोलबंद करना है और उनके साथ एकताबद्ध होकर संघर्षों निर्माण करना है और उन्हें तेज करना है।
2. किसान खुद को एक संगठित क्रांतिकारी शक्ति के रूप में विकसित होने के लिए व्यापकता से, विभिन्न रूपों से, जनकार्य, जनसंपर्क, राजनीतिक प्रचार–प्रसार कार्यक्रम और जन चेतना यात्रा करना है। किसानों और किसान कार्यकर्ताओं में 'कृषि समस्या और उसका फौरी और दीर्घकालीन समाधान' इस विषय पर नियमित अभ्यास वर्ग, व्याख्याने, चर्चासत्र आयोजित करना है। आत्महत्या करना समस्या का इलाज नहीं बल्कि क्रांति के विचार पर संगठित होकर एक मजबूत इन्सान बनना और मेहनतकशों का राज लाने के लिए लड़ना सही इलाज है यह समाज निर्माण करना।
3. किसान अपनी स्थिति, जगह और परिस्थिति अनुरूप विभिन्न संगठन निर्माण कर सकते हैं। इन तमाम संगठनों का दृष्टिकोण कृषि क्रांति

के तरफ अग्रसर होने का ही होना चाहिए। सभी जगह सभी संगठन बनेंगे ही या बनानाही ऐसा नहीं रहना यह सांगठनिक दृष्टिकोण रहेगा परिस्थिति और किसानों की तैयारी के अनुसार इसे कई कार्य को मिलाकर एक संगठन बना सकते या एक संगठन में अलग–अलग कार्य की समीतियाँ बना सकते हैं।

4. किसान तत्काल रूप से किसी भी संघर्ष अथवा संगठन में रहने पर भी, भविष्य के लिए क्रांतिकारी किसान संगठन और मिलिशिया निर्माण किए बगैर खुद की मुक्ति के तरफ नहीं जा सकते इस समझ को उन्होंने विकसित करना है और वैसे निर्माण भी करने का पहल करना है।
5. संपूर्ण कर्ज माफी (बैंक एवं साहुकार दोनों), सी2+75 प्रतिशत एमएसपी, काश्तकारों के लिए वाजिब दरों, बीज–खाद–कीटकनाशकों पर सब्सिडी, कृषि मंडीयों में गरीब और मध्यम किसानों का संचालक मंडल, बिना किसी रुकावट या पंजीकरण के संपूर्ण माल की खरीदी की गारंटी, 24 घंटे बिजली की उपलब्धी, सस्ते दरों में बिजली, वास्तविक जैवीक कृषि और जीएम नसलों पर पाबंदी, स्वामिनाथन आयोग का अमल, सिंचन की ड्रिप तकनीक का इस्तेमाल करने के लिए जरूरी सामग्री का सभी किसानों को मुफ्त वितरण, सिंचन की उपलब्धी, सिंचन व्यवस्था का निर्माण और परियोजनाओं को किसान कमेटियों को सौंपना और सिंचन घोटालों में लिप्त मंत्रियों, अफसरों और ठेकेदारों पर कार्रवाई, सरकारी शीतगृहों के निर्माण, सरकारी दुग्ध भंडारण व्यवस्था, सभी गरीब किसानों को अल्प दरों पर अनाज और जीवनोपयोगी वस्तु उपलब्ध कराना, गरीब किसानों के बच्चों को स्कूल मुफ्त नहीं रहना इत्यादी माँगों पर संघर्ष खड़े करने चाहिए। इससे बीज, खाद, किटकनाशक, बिजली, सिंचाई, साधनों का सवाल, फसल बीमा, सामाजिक सुरक्षा, कर्ज, अन्न सुरक्षा, रोजगार, सहकारी सोसाईटीज, कृषि के लिए मूलभूत संरचना, मार्केट आदि और कई सवाल है जिसमें किसानों की जिंदगी जकड़ी हुई है। किसान इन तमाम सवालों को उठाते हुए, उन्हें कृषि क्रांति के कार्यक्रम 'जोतने वालों को जमीन और सारी सत्ता क्रांतिकारी किसान कमेटी के हाथ' इस नारे के साथ जोड़कर अपनी तात्कालिक मांगो को लेकर संघर्ष में सक्रिय भागीदारी करना चाहिए, उसमें पहल करते हुए आंदोलन को खड़ा करना चाहिए।

6. सुधारवादी, संशोधनवादी, उत्तर–आधुनिकतावादी, गांधीवादियों आदि द्वारा किसानों के समस्याओं पर संचालित की जाने वाले आंदोलनों के बारे में किसान किसान सतर्क रहना है। क्योंकि इन्होंने आंदोलनों को कमजोर करते हैं। सुधारवादी और संसदीय मार्ग तक आंदोलनों को सीमित रखते हैं। लेकिन इनके साथ तात्कालिक मांगों के आधार पर संयुक्त रूप से संघर्ष में भागीदारी लेना चाहिए। इनमें से कुछ शक्ति को सही रास्ते पर लाकर बाकी के साथ संघर्ष करते रहना चाहिए। विरोधी पक्ष के रूप में रहने वाले सत्ता में आते ही बदल जा रहे हैं। मध्यम मार्गी नेतृत्व केवल विश्लेषणों और भाषणों में ही तेवर दिखा रहे हैं। पर किसानों के मुक्ति के लिए नहीं सोच रहे हैं। उनके पास न तो दिशा है, और न ही सत्ता के खिलाफ लड़ने की हिम्मत। वह मौका देखकर कभी–कभी क्रांति की बात तो करते हैं। पर क्रांति के रास्ते पर चलने से कतराते हैं। वे किसानों का गुस्सा देखकर जोश में आकर माओवादी बनने की बाते कह डालते हैं, पर सत्ता के खिलाफ हथियार उठाने से डरते हैं। किसानों की बदहाली और आत्महत्या के पीछे राज्यसत्ता की नीतियों और भौतिक कारणों को हल करने के लिए लड़ने के बजाय मनोवैज्ञानिक कारणों में हल ढूंढते है। निर्विकार दिखने वाले, सादगी से रहने वाले कई किसान नेता, कार्यकर्ता, व्याख्याता, समन्वयक और संयोजकों की जमात देशभर में तैयार हो गई है। जाने अनजाने में वे इस व्यवस्था का सुरक्षा मार्ग (सेफ्टी वॉल्व) का काम कर रहे हैं। किसी ने सांसद, विधायक, मंत्री बनकर अपनी कीमत वसूल की है, किसी ने मंडलों के अध्यक्ष, संस्थानों के मुखिया अथवा विशेषज्ञ का दर्जा हासिल कर अपनी कीमत वसूल की है, तो कोई समस्या को उजाकर कर भव्य–दिव्य कर दिया ऐसी आत्मसंतुष्टी से गद्‌गद् है। ऐसे सुधारवादी, संशोधनवादी, उत्तर–आधुनिकतावादी, गांधीवादियों का लगातार भण्डाफोड़ करना है।
7. कुछ किसान नेता जो संसदीय चौकट में ही किसान समस्या का समाधान ढूंढ रहे हैं। उनके साथ संघर्ष और एकता के आधार पर व्यवहार करना चाहिए, और कुछ तो किसान नेता बनकर आंदोलन तोड़ने के काम करते हैं, उनका पूरजोर विरोध करना चाहिए। किसानों की तात्कालिक मांगों के लिए गोलबंदी और संघर्ष में किसान साथ देना है और उनके नेता जो राजनीतिक पार्टियों के

पिछलग्गू बन जाने और आंदोलन को सीमित रखकर धोखेबाजी करते हैं, उसकी आलोचना करना है।

8. कृषि के साथ–साथ पर्यावरण, जंगल और जल संसाधनों का संरक्षण, पशु पालन, मुर्गा पालन, मछली पालन, फूल बागान, फल बागान, साग–सब्जी, नरसरी (पेड़–पौधों का संवर्धन स्थान), औषध और सुगंध पौधों के बागान आदि क्षेत्रों के समस्याओं को लेकर किसान आंदोलनों का निर्माण करना है।
9. ब्राह्मणीय हिंदू फासीवादी मोदी गुट ने सत्तारूढ़ होने के बाद पशु व्यापार पर निषेध लागू किया है। इससे किसान खेती के लिए अयोग्य पशुओं को बेचने, जरूरी पशुओं को खरीदने का अधिकार खो दिये हैं। इसके खिलाफ किसानों को गोलबंद करना है। पशुओं को बेचने व खरीदने का अधिकार के लिए आंदोलन करना है।
10. क्रांतिकारी किसान संगठन के संघर्ष, उपलब्धियों के बारे में मैदान इलाके के किसानों में व्यापक और बारंबार उनकी स्थानिक भाषा में प्रचार करना है।
11. एकदम बदहाली की परिस्थिति वालों को सामूहिकता से मदद इकट्ठा कर देना है और यह परंपरा आम बना देना है।
12. समय–समय पर शासक वर्गों के राजनीतिक नेता और सरकारी कर्मचारी को गांवबंदी घोषित करने के आंदोलन के तरीके इस्तेमाल करना है।

प्रिय अन्नधाताओं और जनता!

भारत के दलाल शोषक–शासक वर्गों द्वारा लागू की जा रही उदारीकरण नीतियों के कारण देश के अंदर भारी उद्योगों में वृद्धि नहीं आयी। लाखों संख्या में छोटे और मझोले उद्योग एंव कुटीर उद्योग बंद पड़ चुंके हैं। शिक्षा, स्वास्थ, बीमा जैसे सेवा क्षेत्रों को और जमीन, जंगल, खनिज सम्पत्ति, जल स्रोतों आदि प्राकृतिक संसाधनों को देश–विदेशी कार्पोरेट कम्पनियों का हवाला कर रहे हैं। पर्यावरण, मानव जीवन और मानव मूल्य ध्वस्त की जा रही है। देश की आबादी में जीवन–यापन के लिए आधे लोग निर्भर होने वाली कृषि क्षेत्र संकट में तड़प रही है। गरीबी, बेरोजगारी, रोजमर्रा सामग्री की मूल्य बड़ी हैं। किसान इन विषयों को समझ कर क्रांतिकारी राजनीतिक के साथ चेतनाबद्ध होते हुए मजदूरों, कर्मचारियों, उत्पीड़ित जनता और उत्पीड़ित सामाजिक समुदायों के साथ एकताबद्ध होना चाहिए। इनके साथ व्यापक

संयुक्त मोर्चा में शामिल होकर व्यापक किसान आंदोलन को विकसति करना चाहिए।

नक्सलबाड़ी के महान सशस्त्र किसान संघर्ष की विरासत को संजोये भाकपा (माओवादी) ने हजारों बलिदान देकर सशस्त्र संघर्ष के झंडे को बुलंद रखते हुए आगे बढ़ रही है। यह सशस्त्र संघर्ष का विचार जो वास्तविक रूप में आज किसानों के मुक्ति का विचार है। किसान इस विचार के साथ आत्मसात होना चाहिए। इसकी रोशनी में विशेषकर मैदान इलाकों में किसान संगठित होना चाहिए। किसान अपनी वर्तमान समस्या का स्वरूप, उसके कारण और उसका तात्कालिक और दीर्घकालीन इलाज के बारे समझना चाहिए। मोदी सरकार की धोखेबाजी नीतियों और मध्यमार्गियों की सीमाओं को उजागर करते हुए व्यापक मित्रों और मित्र संगठन के साथ मिलकर संयुक्त रूप से संघर्ष को संचालित करना है। किसान अपने अंदर धैर्य और आत्मविश्वास बढ़ाना चाहिए और हताशा और निराशा से बाहर निकालना चाहिए। अपनी सारी समस्या की जड़ मौजूदा अर्ध औपनिवेशिक–अर्ध सामंती व्यवस्था है जिसकी बागडोर भारत के दलाल शासक वर्ग के हाथ में है और जिसकी सेवा के लिए देश और विभिन्न राज्यों में कभी काँग्रेस की नेतृत्व में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन की तो कभी भाजपा के नेतृत्व में राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन की, क्षेत्रीय पार्टियों, उनके गठबंधनों की सरकारें बनाये जाती हैं। किसानों के लिए यह राजनीति एक दुष्टचक्र बन चुका है। इसलिए किसान क्रांतिकारी राजनीति के साथ चेतनाबद्ध होना चाहिए। हमारी पार्टी व्यापक किसानों का आह्वान करती है कि वे अपनी आंदोलन को केवल एमएसपी या कर्ज माफी की मांग को हासिल करने तक सीमित न रखकर, आज की शासक वर्गों की दुष्ट राजनीति के जाल को तोड़कर अपनी नयी दुनिया निर्माण करने के लिए आगे बढ़ें।

क्रांतिकारी अभिवादन के साथ,

केन्द्रीय कमेटी

2 फरवरी, 2019

भाकपा (माओवादी)